ओ३म्

पाक्षिक परोपकारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वर्ष - ५८ अंक -३ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र फरवरी (प्रथम) २०१६

महर्षि दयानन्द सरस्वती

विश्व पुस्तक मेला, दिल्ली में महाशय धर्मपाल जी (एम.डी.एच. मसाले वाले)
"वैदिक पुस्तकालय" की स्टॉल पर

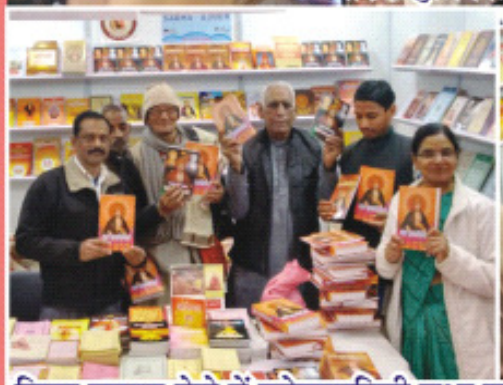

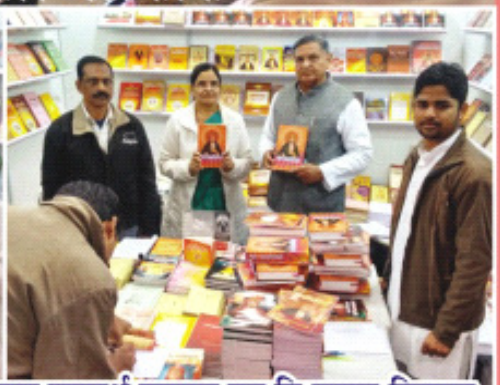

विश्व पुस्तक मेले में परोपकारिणी सभा द्वारा सत्यार्थ-प्रकाश का नि:शुल्क वितरण

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५८ अंक : ३
दयानन्दाब्द: १९१
विक्रम संवत्: माघ कृष्ण, २०७२
कलि संवत्: ५११६
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११६

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-
भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

फरवरी प्रथम २०१६

अनुक्रम

१. सन्ति सन्त: कियन्त:	सम्पादकीय	०४
२. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	०९
३. पुनरुत्थान युग का द्रष्टा	स्व. डॉ. रघुवंश	१७
४. सृष्टि उत्पत्ति क्यों और कैसे ?....	पं. उदयवीर शास्त्री	२२
५. मन्त्रों का वैज्ञानिक विवेचन	आर.बी.एल. गुप्ता	२७
६. वैदिक पुस्तकालय के प्रकाशन		२९
७. भारत में वैदिक युग के सूत्रधार....	आचार्य चन्द्रशेखर	३१
८. जिज्ञासा समाधान-१०४	आचार्य सोमदेव	३५
९. स्तुता मया वरदा वेदमाता-२७		३७
१०. संस्था-समाचार		३९
११. पुस्तक समीक्षा	देवमुनि	४१
१२. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

सम्पादकीय

सन्ति सन्तः कियन्तः

इसका अर्थ है- संसार में ऐसे सन्त कितने हैं, जो दूसरे के छोटे-से गुण को बड़ा बनाकर उसकी प्रशंसा करते हैं और प्रसन्न होते हैं? हमारी सभा के संरक्षक गजानन्द जी आर्य के लिये यह पंक्ति मुझे सर्वाधिक सटीक लगती है। सभा में आर्य जी का जब से साथ मिला है, मेरे अनुमान और अनुभव से उनकी उदारता को बड़ा ही पाया है। गत दिनों उन्होंने मुझे फिर चकित कर दिया, उस घटना का उल्लेख करना सभा के हित में तथा पाठकों के लिये प्रेरणाप्रद होगा।

विगत तीन वर्षों से निरन्तर आर्य समाज विधान सरणी के वार्षिक उत्सव में जाने का प्रसंग बना। यह अवसर आर्य समाज के उत्सव से अधिक मुझे अपनी सभा के प्रधान गजानन्द जी आर्य से मिलने का, उनसे आशीर्वाद प्राप्त करने के अवसर के रूप में अधिक आकर्षित करता है। प्रतिवर्ष जब भी कोलकाता जाने का अवसर मिलता है, मेरा उनके घर जाकर दो-तीन बार भेंट करने का संयोग बन जाता है । प्रधान जी को अजमेर पधारे बहुत समय हो गया था। सभा के सभी सदस्यों की इच्छा थी कि प्रधान जी से मिलना चाहिए। सदस्यों के आग्रह पर सभा की एक बैठक कोलकाता में प्रधान जी के घर पर रखी थी, उस समय सभा सदस्यों से उनका अच्छा संवाद हुआ । प्रधान जी को भी सबसे मिलकर बहुत प्रसन्नता हुई। इस बैठक के समय परोपकारिणी सभा के सदस्यों के आवास एवं भोजन आदि की व्यवस्था आर्य समाज विधान सरणी ने बड़े स्नेह और उदारता से की। कोलकाता की आर्य समाजें आर्य जी के लिये प्रेम और आदर का भाव रखती हैं। सभी उनको श्रेष्ठ आर्य पुरुष के रूप में देखते हैं।

गत वर्षों की भाँति दिसम्बर मास में आर्य समाज विधान सरणी के उत्सव में पहुँचने की सूचना आर्य जी को मिल गई थी। उन्होंने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा- मिलने का अवसर मिलेगा, अवश्य आओ। कार्यक्रम के अनुसार आर्य समाज के उत्सव के लिये मेरा कोलकाता जाना हुआ। उत्सव का प्रथम दिन शोभा यात्रा का दिन होता है। उस दिन कहीं जाना संभव नहीं था। विचार था, अगले दिन आर्य जी से भेंट करने के लिये जाऊँगा, तभी आर्य जी का दूरभाष आ गया- कब आ रहे हो? मुझे लगा, आर्य जी शीघ्र मिलने की इच्छा रखते हैं। अगले दिन प्रातःकालीन कार्यक्रम सम्पन्न कर मैं उनके आवास पर पहुँचा। सहज भाव से दरवाजे की घण्टी बजाई। द्वार खुलते ही मैं आर्य जी को नमस्ते कर एक और बैठना चाहता था कि आर्य जी ने अपने स्थान पर खड़े होकर मुझे निर्देश दिया- मैं उनके निकट आकर खड़ा रहूँ। उन्होंने माता जी को बुला लिया। एक शाल लाकर माता जी ने आर्य जी के हाथ में दिया। आर्य जी ने शाल खोलकर मेरे कन्धे पर डालते हुए प्रसन्नता के साथ कहा- आज हमारी सभा के प्रधान हमारे घर पधारे हैं, हम आपका अभिनन्दन करते हैं। माता जी ने भी आशीर्वाद देते हुए अपनी प्रसन्नता व्यक्त की। मैं अवाक् और चकित था। वहाँ दो-तीन घर के सेवकों के अतिरिक्त कोई नहीं था। मेरे पास अपने भाव व्यक्त करने के लिये शब्द नहीं थे। मुझे फिर लगा, आर्य जी मेरी कल्पना से भी बड़े हैं।

पद ने मुझे मेरे कार्य से कभी पृथक् अनुभव नहीं होने दिया। जिस दिन सभा का सदस्य नहीं था, स्वामी ओमानन्द जी महाराज सभा के प्रधान थे, उनके कारण सभा से जुड़ने का सौभाग्य मिला। उस दिन भी सभा का कार्य करते हुए ऋषि दयानन्द के कार्य को कर रहा हूँ, यही अनुभव था। सभा ने मुझे सदस्य बनाया, तब भी मेरा यही अनुभव रहा। मुझे पुस्तकाध्यक्ष पुकारा, तब भी मेरा वही काम और वही भाव था। मुझे आर्य जी ने अपने साथ संयुक्त मंत्री बनाया, तब भी मेरे लिये न कार्य के स्तर पर कुछ नया था, न विचारों के स्तर पर। आर्य जी को सभा ने प्रधान बनाया, आर्य जी ने मुझे अपना मंत्री चुना, तब भी मेरे सेवा कार्य का कोई स्वरूप नहीं बदला और आज आर्य जी ने अपने को प्रधान पद से मुक्त करते हुए मुझे अपना दायित्व सौंपा, तब भी मुझे मेरे कार्य में कुछ भी नवीनता नहीं लगी। जो कर रहा हूँ, उसमें बदलने के लिए मेरे पास कुछ भी नहीं

है। पहले उत्तरदायित्व आर्य जी के पास था और मैं मुक्त था, परन्तु आज भी वे सभा के संरक्षक हैं, तब भी मैं उनको उतना ही अपने निकट अनुभव करता हूँ। आर्य जी ने सभा के सदस्यों को परस्पर इस तरह से जोड़ा है कि सभी लोग समान विचार से परस्पर सहयोग करते हैं, जिससे सभा की निरन्तर प्रगति और उन्नति हो रही है।

सभा की वर्तमान कार्य विधि का श्रेय स्वामी सर्वानन्द जी महाराज तथा सभा संरक्षक गजानन्द जी आर्य को है। उनकी उदारता और लोकप्रियता के कारण समाज का उदारतापूर्ण सहयोग सभा को प्राप्त हो सका। पुराने आर्यजन सभा से जुड़े और कार्य में गति आई। हमारे सभा प्रधान आर्य जी सभा की उन्नति क्यों हो रही है- इसका मूल्यांकन इस तरह करते हैं। हमारी सभा में कोई नहीं कहता कि यह कार्य मैंने किया है। सब कहते हैं- यह प्रधान जी के कारण हो सका है। प्रधान जी कहते हैं- सदस्यों के सहयोग से यह कार्य हो सका है। अधिकारी सदस्य, सदस्यों के सहयोग को कारण मानते हैं। सदस्य अधिकारियों की कर्मठता को श्रेय देते हैं। इसका कारण था- स्वामी सर्वानन्द जी और गजानन्द जी का अपने सदस्यों के साथ आत्मीय भाव।

सभा के किसी पद की आर्य जी ने कभी इच्छा नहीं रखी और सभा ने कभी उन्हें मुक्त नहीं होने दिया। आर्य जी ने जब भी पद छोड़ा, अपने आग्रह से छोड़ा और सभा ने उन्हें बलपूर्वक पद पर बनाये रखा। संभवत: यही दुर्लभ बात सभा की प्रगति का कारण है।

आर्य समाज के प्रारम्भिक काल को छोड़कर सभा और संगठनों पर कहीं राजनीतिक लोगों का, कहीं जातिवादी लोगों का तो कहीं धनी लोगों का वर्चस्व रहा है। उनका हित ही संगठन का हित समझा जाता है। विद्वान् व संन्यासियों को तो ये नेता कहलाने वाले लोग यह कहकर दूर कर देते हैं कि आपका काम प्रचार करना है, संगठन चलाना नहीं। कोई इनसे पूछे कि संगठन का काम प्रचार करना नहीं होकर क्या अपने-अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिये झगड़े करना और सभा समाज की सम्पत्ति का दुरुपयोग करना है? आज यह परोपकारिणी सभा के लिये गौरव की बात है कि इसके तेईस सदस्यों में अट्ठारह सदस्य विद्वान् प्रचारक, लेखक और पत्रकार हैं। किसी संस्था में एक भी व्यक्ति कर्मठ, निष्ठावान् होता है तो संस्था उन्नति करती है, आज सभा का प्रत्येक सदस्य तन-मन-धन से सभा की उन्नति में लगा है तो सभा की प्रगति कैसे नहीं होगी? सभा जातिवाद, राजनीतिवाद, धनवाद, वर्गवाद के सभी रोगों से मुक्त है। आर्य जी की कार्य शैली, ऋषि के प्रति दृढ़भक्ति और सिद्धान्तों के प्रति निष्ठा का ही यह परिणाम है। सभा के द्वारा जो कार्य हस्तगत हो रहे हैं, उसमें अधिक कार्य ऐसे हैं, जो दिखाई नहीं देते। उनका वर्तमान के लिये विशेष लाभ दिखाई न दे, परन्तु भविष्य के कार्य की वे आधारशिला हैं। इनकी चर्चा किसी और प्रसंग के लिये छोड़ते हैं। सभा द्वारा अपनी गतिविधियों में पठन-पाठन, प्रचार, प्रकाशन के साथ योग साधना शिविरों का आयोजन वर्ष में दो बार किया जाता है। इनमें भाग लेने से व्यक्ति के विचारों में स्पष्टता आती है, सिद्धान्त की मान्यता दृढ़ होती है, कार्य करने का उत्साह बढ़ता है और निराशा समाप्त होती है। इसका एक उदाहरण कभी नहीं भूलता। दिल्ली के लाला श्याम सुन्दर जी, जो मूल रूप से बादली-झज्जर के निवासी थे, आश्रम के शिविरों में आते रहते थे। शिविर की समाप्ति पर शिविरार्थी अपने शिविर काल के अनुभव सुनाते हैं। एक शिविर के अनुभव सुनाते हुए लाला जी ने कहा- मुझे शिविर में आकर पहला अनुभव यह हुआ कि मैं समझने लगा था कि आर्य समाज का कार्य शिथिल हो गया है, उसका वर्चस्व समाप्त हो गया है, परन्तु शिविर का अनुभव कहता है-आज भी आर्य समाज में जीवन डालने वाले लोग हैं और आर्य समाज का कार्य प्रगति पर है। लाला जी ने दूसरी बात कही- आश्रम में आकर अनुभव हुआ कि यहाँ किसी की अनुपस्थिति से कोई कार्य रुकता नहीं। प्रधान नहीं है तो मन्त्री, मन्त्री नहीं है तो सदस्य, वह नहीं है तो कार्यालय का व्यक्ति, कभी वह भी नहीं हुआ तो सेवक ही सारे काम कर देता है, किसी की अनुपस्थिति से कोई कार्य बाधित नहीं होता। यह सामूहिक रूप से कार्य करने का परिणाम है।

सभा को स्वामी जी और आर्य जी जैसे वीतराग व्यक्तियों का मार्गदर्शन और संरक्षण प्राप्त रहा, यही सभा का सौभाग्य है।

प्रधान जी में सरलता और निरभिमानता कूटकूट कर भरी है। अनेक बार मेरी शिकायतें लेकर लोग प्रधान जी के पास पहुँचते हैं, वे मुझे बता देते हैं- कौन आया था और क्या कह रहा था। एक बार एक व्यक्ति के बारे में बता रहे थे, वह व्यक्ति कह रहा था- यह धर्मवीर प्रधान को महत्त्व नहीं देता, स्वयं सब कार्य करता है। मैंने पूछा- आपको यह बात बुरी लगी होगी, तो कहने लगे- मुझे क्यों बुरी लगेगी, जो कार्य तुम करते हो, उसके लिए तुम्हें ही उत्तरदायी बनकर आगे आना होगा। पौत्र पराग के विवाह के अवसर पर मुम्बई में होटल में मिले तो एक तरफ ले जाकर हाथ पकड़कर कहने लगे- जब कोई व्यक्ति तुम्हारे विषय में अन्यथा बात करता है तो मुझे बहुत दुःख होता है, बुरा लगता है। मैंने कहा- मुझे तो बुरा कहने वाले का बुरा नहीं लगता है, आपको भी नहीं लगना चाहिए। बोले- नहीं, यह सहन नहीं होता। ऐसे सहृदय सज्जन संसार में कितने हैं, जो अन्यों के परमाणुतुल्य गुणों को पर्वताकार बनाकर नित्य ही अपने अन्दर प्रसन्नता का अनुभव करते हैं? प्रधान जी के व्यक्तित्व को देख कर महाराज भृर्तहरि की ये पंक्तियाँ होंठों पर आ जाती हैं-

मनसि वचसि काये पुण्यपीयूषपूर्णा-
स्त्रिभुवनमुपकारः श्रेणिभिः प्रीणयन्तः।
परगुणपरमाणून् पर्वतीकृत्य नित्यं,
निजहृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः।।

- धर्मवीर

मेरी सम्पत्ति

- गजानन्द आर्य

पिछले जन्मदिन के अवसर पर आर्य जी ने अपने परिवारजनों के मध्य स्वयं के जीवन से सम्बन्धित उस महत्त्वपूर्ण भाग पर प्रकाश डाला, जिससे आर्य जी के जीवन की पवित्रता, सहजता और सात्विकता पर प्रकाश पड़ता है। उनका यह वक्तव्य लिखित रूप में है, जिसका शीर्षक है 'मेरी सम्पत्ति'। इसे पढ़कर आप आर्य जी के जीवन से अवश्य प्रेरणा प्राप्त कर सकेंगे। - **सम्पादक**

मैं जब कलकत्ता में पढ़ता था, तब जीवन में एक ऐसी स्थिति आई, जब कॉलेज की पढ़ाई छोड़कर अपनी पारिवारिक कपड़े की दुकान पर बैठ कर हिसाब-किताब की जिम्मेवारी मुझे अपने ऊपर लेनी पड़ी। दुकान का सारा क्रय-विक्रय, लेन-देन, बिल, रसीद आदि का लिखना सब कुछ मुझे करना होता था। हमारी दुकान पिताजी और उनके दो अन्य चचेरे भाइयों का साझा व्यापार था, इस कारण हिसाब-किताब की पारदर्शिता बहुत आवश्यक थी। मैंने इस दायित्व को पूरी जिम्मेवारी व ईमानदारी से निभाया। मैंने इस बात को गाँठ में बाँध लिया था कि जो भी कमाई करनी है, वह इस साझे व्यापार से करनी है। मुझे अपनी व्यक्तिगत कोई पूँजी, जिसे हमारे यहाँ गाँठी कहा जाता था, नहीं रखनी है। लाखों रुपयों का लेने-देन मेरे हाथों से होता था, लेकिन मैंने कभी अपने लिए उसमें से एक रुपया भी नहीं लिया।

जब मेरा विवाह हो गया और कुछ महीनों के बाद तारामणी कलकत्ता आई, तो मेरे दुकान के सहयोगियों को लगा- अब घर की जिम्मेवारी बढ़ गयी है, तो फिर वो ईमानदारी कहाँ रहेगी? लोगों की मनःस्थिति समझ कर मैंने घर खर्च की एक डायरी डाल ली, जिसमें मैं अपना दैनिक खर्च लिखने लगा। घर गृहस्थी के छोटे से छोटे खर्च का विवरण उसमें रहता। घर का कोई भी बुजुर्ग डायरी को देख सकता था। मेरी उन डायरियों में से आज भी कुछ मेरे पास पड़ी हैं। मुझे इन सब बातों का यह लाभ हुआ कि मेरा पूरा जीवन उसी स्तर की अर्थ शुचिता के साथ-साथ बीता।

मैंने जीवन में अपने लिए कभी कुछ नहीं रखा। मैं शपथपूर्वक कह सकता हूँ की आज ८५ वर्ष की आयु में मेरा कोई बैंक बैलेंस नहीं है, न ही मेरी कोई जमीन जायदाद है। कोई कम्पनियों के शेयर नहीं है। नकद के रूप में कुछ नहीं है। केनारा बैंक में एक लॉकर है, जिसमें तारामणी के कुछ जेवर हैं और एक दस हजार रुपयों की फिक्स्ड डिपाजिट की रसीद है। इस लॉकर में मेरा कुछ नहीं है।

जीवन भर पढ़ने और लिखने की रुचि रही, इस कारण मेरे पास सैंकड़ों ग्रंथों का संग्रह बन गया। धीरे-धीरे आँखों की रौशनी क्षीण हो गयी, पढ़ना संभव नहीं रहा। इस अवस्था में मैंने अपनी सबसे बड़ी निधि अपनी किताबों

का वितरण शुरू कर दिया । मेरे पास आने वाले जिस सदस्य को जो किताब अच्छी लगी, वह उसे दे दी। अब भी थोड़ी बची है। किसी को चाहिए तो ले ले।

कुछ नहीं होने के उपरान्त भी मैं बहुत भाग्यवान हूँ और अपने-आपको दुनिया का सबसे बड़ा धनवान मानता हूँ। मेरे पूरे परिवार से मुझे जो सेवा और सुरक्षा मिली है, उसका कोई मूल्यांकन संभव नहीं है।

लिखने के शौक को सार्थक किया भाई सत्यानन्द ने। मेरे लेखों को पत्र-पत्रिकाओं में भेजना, मेरी लिखी किताबों को छपवाना, ये सारा दायित्व भाई ने एक कर्त्तव्य की तरह निभाया। सत्यानन्द के इस नि:स्वार्थ सहयोग की कीमत आँकना मेरे लिए संभव नहीं है। समस्त आर्य जगत् में मेरी छवि एक चिंतक और लेखक के रूप में स्थापित हुई सत्यानन्द के कारण। सत्यानन्द ने मुझे अलखनंदा और ऐसी अन्य ऐतिहासिक स्थलों की यात्रायें करवाईं।

यूँ तो मेरी चारों बहनों ने मुझे हमेशा बहुत आदर सत्कार और स्नेह दिया है, लेकिन सुशीला भारत के पूर्वी हिस्से में होने के कारण मुझसे निरंतर मिलती रही है। उसका आना हमेशा सुखद होता है, हम सब मिलकर सत्संग का आनंद लेते हैं। सभी मिलकर भजन गाते हैं। हमारी बीमारी आदि की परिस्थिति में वह हमेशा हमारे पास आ जाती है। ऐसी बहनें ही तो जीवन की असली निधि हैं। जीवन की अत्यधिक महत्त्वपूर्ण सम्पत्ति मिली मुझे १९५१ में, पत्नी के रूप में देवी तारामणि। मेरे जीवन के हर संघर्ष में उन्होंने मेरा पूरा साथ दिया। तारामणी के कारण मेरी परिवार में और समाज में-दोनों जगह प्रतिष्ठा बढ़ी। वानप्रस्थ जीवन में तो मैं इन्हें माँजी मानने लग गया हूँ। मेरी अस्वस्थता के सामने ये अपनी सारी अस्वस्थता भूल जाती हैं। जीवन में जो काम मेरे थे, जैसे दैनिक हवन, विद्वानों का आतिथ्य और सन्मान, सब कुछ इन्होंने सँभाल रखा है।

किसी भी व्यक्ति की सम्पत्ति उसकी योग्य संतति होती है। मुझे भी अपने बच्चों पर गर्व है। मेरी लम्बी और जटिल बीमारी के समय मुंबई में सविता हर समय मेरे पास बैठी रहती । उसका घर महेंद्र के घर से काफी दूर स्थित है, लेकिन वह कब आती और कब जाती, हमें कुछ पता नहीं लगता। कभी पुस्तकें पढ़कर सुनाती, कभी भजन गाती और हमारी बातें सुनती। महीनों तक ये सिलसिला चला। आज तक जीवन की कोई कठिनाई हो, सविता हमेशा हमें हमारे पास मिलती है। अब जब टेलीविजन पर खबरें देख और सुन नहीं पाता, तब सविता की बेटी शीतल ने एक छोटा-सा रेडियो मुझे भेज दिया है, जो मुझे देश में होने वाली सभी घटनाओं से जोड़ कर रखता है।

बेटे महेन्द्र के बारे में क्या कहूँ? मेरे पिताजी हमेशा सबसे मेरे बारे में कहते थे- सामाजिक कामों में मेरा बेटा गजानंद मुझसे आगे निकल गया है। आज मैं वही बात गर्व से अपने बेटे महेन्द्र के विषय में कह सकता हूँ। महेन्द्र समाज सेवा ही नहीं, बल्कि अपने आर्य समाजी चिंतन में मुझसे आगे निकल गया है। उसके कविता के रूप में अनुवादित मन्त्र बहुत प्रचलित हुए हैं, हम उसकी बहुत सारी कविताओं को रोज गाते हैं। मेरी एक पुस्तक 'आर्य समाज की मान्यताएँ' का उसने बहुत सुन्दर अंग्रेजी अनुवाद और प्रकाशन किया है। मुंबई में लायंस क्लब और मिलेनियम के संस्थापक और संचालक रूप में उसने अपनी नेतृत्व कला को प्रखर किया है। छोटे बेटे नरेन्द्र और बहू रंजना ने भी आर्य समाज बैंगलोर में भाग लेकर हमारी पारिवारिक परंपरा को जारी रखा है।

जीवन के पिछले बीस वर्ष बीमारी के साथ संघर्ष में ही बीते हैं। निरंन्तर इलाज पर खर्च होता रहा है, लेकिन भाइयों और बेटों ने मुझे इस निरंतर चल रहे व्यय का आभास भी नहीं होने दिया। सभी जानते हैं कि मेरे पास कुछ भी नहीं है, शायद इस कारण उनकी सेवा अपेक्षा से भी बहुत अधिक मिलती रही। अगर में अपनी पूँजी जोड़ कर बैठा होता तो शायद उन्हें लगता कि मुझे क्या आवश्यकता होगी?

यूँ तो मुझे मेरे सभी पौत्र, पौत्रियाँ, दुहित्र, दुहित्रियाँ प्रिय हैं, लेकिन मेरे इस बुढ़ापे में मेरी यात्राओं का सहारा बना वरुण। जब मैं बहुत अस्वस्थ हो गया, ऐसा लगने लगा कि उस वर्ष अजमेर यात्रा संभव नहीं हो पाएगी, तब वरुण ने यह दायित्व सँभाला। वरुण ट्रैवल के बिजनेस में है। उसने मेरी यात्राओं की हवाई जहाज की टिकटें बनवायीं न जाने कितनी बार। न केवल टिकटें बनवाईं, बल्कि

मेरी, तारामणी और हमारे साथ हमारे सेवक मोहन की यात्राओं में हर समय हमारे साथ गया। जयपुर अजमेर जाने की व्यवस्था वही करता। मैं कई बार उससे कहता- वरुण मेरे जैसे ग्राहक से तुम्हारा नुकसान ही होता है। वह हँस कर उत्तर देता है- दादाजी आपको पता नहीं, कितना लाभ होता है? वरुण का ये योगदान मेरी अमूल्य निधि है।

भले ही व्यक्तिगत रूप से सभी सदस्यों की चर्चा नहीं कर रहा हूँ, लेकिन परिवार के सभी सदस्य मुझे इतना प्रेम और आदर देते हैं, ये सभी लोग मेरी निधि हैं। आर्य समाज और परोपकारिणी सभा के कारण कितने ही मित्र और शुभचिंतक जीवन में मिले, ये सब भी मेरी सम्पत्ति का हिस्सा हैं। इस तरह की निधि का स्वामी होने के नाते क्या मैं सबसे धनवान नहीं हूँ?

- कोलकाता

मेरे पिता

-सविता गुप्ता

पिताजी के जीवन से बहुत-सी बातें मुझे सीखने को मिलीं-

१. बीमारी कैसी भी रही हो, पिताजी ने कभी अपनी बीमारियों को अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया। जब भी किसी ने उन्हें पूछा कि आप कैसे हैं, उन्होंने हमेशा हँसकर उत्तर दिया है कि बहुत अच्छा हूँ।

२. मैंने उन्हें जीवन में किसी भी व्यक्ति के लिए कुछ बुरा कहते हुए नहीं सुना। जीवन में उन्हें किसी से कोई भी शिकायत नहीं रही है।

३. विपरीत परिस्थितियों में भी उनका हौसला बना रहता है। उन्हें कान से सुनना करीब-करीब बंद हो गया। आँखों से देखना भी बहुत कम हो गया। उन्हें खबरें सुनने का बड़ा शौक है। उन्होंने अपना रास्ता निकाल लिया। एक छोटे-से रेडियो को कान के पास लगा कर वो सारी खबरें रोज सुनते हैं। न पढ़ पाने की मजबूरी को भी उन्होंने परिवार-जनों से किताब पढ़वा कर दूर किया। न लिख पाने की मुश्किल का समाधान उन्होंने बोल कर अपनी बातें लिखवा कर किया।

४. भजनों का पिताजी को शौक है, लेकिन अब देखकर गाना उनके लिए संभव नहीं है। एक दिन बोले- सविता तू मुझे कुछ भजन कंठस्थ करवा दे, ताकि जब भी मेरा मन करे, मैं उन्हें गा सकूँ।

ईश्वर में ऐसी दृढ़ आस्था के कारण आज भी पिताजी हर शारीरिक दुर्बलता के उपरांत बहुत मजबूत हैं। ईश्वर उनका हाथ हम सब के सर पर हमेशा बनाये रखे।

- मुम्बई

परोपकारी के सम्बन्ध में घोषणा

प्रकाशन - परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर

संपादक	-	धर्मवीर	**मुद्रक का नाम**	-	श्री मोहनलाल तँवर,
नागरिकता	-	भारतीय	**पता**	-	वैदिक यन्त्रालय,
पता	-	केसरगंज, अजमेर			केसरगंज, अजमेर
प्रकाशक	-	धर्मवीर	**प्रकाशन अवधि**	-	पाक्षिक
नागरिकता	-	भारतीय			
पता	-	कार्यकारी प्रधान, परोपकारिणी सभा, अजमेर			

मैं, धर्मवीर एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि उपरोक्त विवरण मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार सही है।

फरवरी २०१६ **प्रकाशक : धर्मवीर**

कुछ तड़प-कुछ झड़प

– राजेन्द्र जिज्ञासु

२०१५ का ऋषि मेला:- परोपकारी में इस वर्ष के ऋषि मेला पर माननीय **श्री भाई सत्येन्द्रसिंह जी** का लेख पाठक पढ़ चुके होंगे, तथापि इस पर एक दर्शक के रूप में मुझे कुछ पूरक सामग्री देना आवश्यक व उपयोगी लगा। कार्यक्रम में व्यवस्था में कुछ कमियाँ भी रही होंगी, ऐसा स्वाभाविक ही है, तथापि इस वर्ष के ऋषि मेले ने आर्य जनता पर कुछ स्मरणीय व अमिट छाप छोड़ी है। कई घटनायें ऐसी घटीं, जिनसे ऋषि भक्तों को भविष्य में बहुत प्रेरणायें प्राप्त होंगी। वैसे तो सभा के माननीय कोषाध्यक्ष व मन्त्री जी ही इस पर प्रामाणिक प्रकाश डाल सकते हैं, परन्तु यह पता चला कि सभा के सब शुभचिन्तकों, ट्रस्टियों व युवा कार्यकर्त्ताओं ने सभा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये दान देने व दिलवाने में निष्ठापूर्वक अपना-अपना कर्त्तव्य निभाया। कोई इस दृष्टि से पीछे नहीं रहा।

यज्ञ के ब्रह्मा श्रद्धेय **पं. सत्यानन्द जी** का **श्री ओममुनि जी** के परिवार ने सन्मान किया। पूज्य पण्डित जी को श्रद्धापूर्वक सन्मान राशि भेंट की गई। आपने तत्काल स्वेच्छा से यह राशि सभा को देने की घोषणा कर दी एवं ब्रह्मा के रूप में सभा से दी गई दक्षिणा भी सभा को लौटाने की घोषणा कर दी। हमें पता चला कि उनके परिवार में इस समय उनको एक समस्या के कारण धन रखना ही चाहिये था, परन्तु वे अपनी बात पर अड़ गये। पण्डित जी के भक्तों, सभा के अधिकारियों व कई प्रतिष्ठित नेताओं ने बड़ी सूझबूझ से उन्हें अपना निर्णय बदलने पर बाधित किया। ऋषि का मिशन ऐसे पूज्य विद्वानों की सोच व व्यवहार से ही जीवित है। परोपकारिणी सभा के इतिहास में यह घटना स्मरणीय रहेगी।

महर्षि के पत्र-व्यवहार में वर्णित ऋषि भक्त :- सभा ने एक करणीय कार्य करके बड़ा यश पाया है। ऋषि के पत्र-व्यवहार में वर्णित तीन और ऋषि भक्तों के जीवन पर इस बार कुछ लिखा जाता है।

श्री चौधरी जालिम सिंह जी उ.प्र. के एक प्रमुख आर्य नेता हुए हैं। आप आर्य समाज के निर्माताओं में से एक थे। भले ही गत सत्तर वर्षों में आर्य समाज में बाहर वालों की चर्चा अधिक होने से नींव के पत्थर भुला दिये गये। अब निर्देशिका के कारण पत्र-व्यवहार में ऐसे रत्नों को खोजना कोई कठिन नहीं रहा। पाठक जालिम सिंह जी को समझने के लिए उनके पत्र एक बार पढ़ें।

उनकी चर्चा अमरीका के एक उपनिषद् प्रेमी लेखक ने अपने पठनीय ग्रन्थ में की है। Fifty Principal Upnishadas नाम के ग्रन्थ में पं. गुरुदत्त जी आदि हमारे कई विद्वानों की चर्चा व उद्धरण हैं। उसमें चौधरी जालिम सिंह जी का नामोल्लेख देखकर, मैं गद्गद् हो गया। यह ऋषि भक्त एक कर्मठ संगठन कर्त्ता ही नहीं, सिद्धान्तों को समझने वाला विद्वान् भी था।

माई भगवती जी:- ऋषि के पत्र-व्यवहार में माई भगवती जी का भी उल्लेख है। ऋषि मिशन के प्रति उनकी सेवाओं व उनके जीवन के बारे में अब पंजाब में ही कोई कुछ नहीं जानता, शेष देश का क्या कहें? पूज्य **मीमांसक जी** की पादटिप्पणी की चर्चा तक ही हम सीमित रह गये हैं। पंजाब में विवाह के अवसर पर वर को कन्या पक्ष की कन्यायें स्वागत के समय सिठनियाँ (गन्दी-गन्दी गालियाँ) दिया करती थीं। वर भी आगे तुकबन्दी में वैसा ही उत्तर दिया करता था। आर्य समाज ने यह कुरीति दूर कर दी। इसका श्रेय माता भगवती जी की रचनाओं को भी प्राप्त है। मैंने माताजी के ऐसे गीतों का दुर्लभ संग्रह **श्री प्रभाकर जी** को सुरक्षित करने के लिये भेंट किया था।

मैं नये सिरे से महर्षि से भेंट की घटना से लेकर माताजी के निधन तक के अंकों को देखकर फिर विस्तार से लिखूँगा। जिन्होंने माई जी को 'लड़की' समझ रखा है, वे **मीमांसक जी** की एक टिप्पणी पढ़कर मेरे लेख पर कुछ लिखने से बचें तो ठीक है। कुछ जानते हैं तो प्रश्न पूछ लें। पहली बात यह जानिये कि माई भगवती लड़की नहीं थी। 'प्रकाश' में प्रकाशित उनके साक्षात्कार की दूसरी पंक्ति में साक्षात्कार लेने वालों ने उन्हें 'माता' लिखा है। आवश्यकता पड़ी तो नई सामग्री के साथ साक्षात्कार फिर से स्कैन करवाकर दे दूँगा। श्रीमती व माता शब्दों के प्रयोग से सिद्ध है कि उनका कभी विवाह अवश्य हुआ था।

महात्मा मुंशीराम जी ने उनके नाम के साथ 'श्रीमती' शब्द का प्रयोग किया है। इस समय मेरे सामने माई जी

विषयक एक लोकप्रिय पत्र के दस अंकों में छपे समाचार हैं। इनमें किसी में उन्हें 'लड़की' नहीं लिखा। क्या जानकारी मिली है- यह क्रमशः बतायेंगे। ऋषि के बलिदान पर लाहौर की ऐतिहासिक सभा में (जिसमें ला. हंसराज ने डी.ए.वी.स्कूल के लिए सेवायें अर्पित कीं) माई जी का भी भाषण हुआ था। बाद में माई जी लाहौर, अमृतसर की समाजों से उदास निराश हो गईं। उनका रोष यह था कि डी.ए.वी. के लिए दान माँगने की लहर चली तो इन नगरों के आर्यों ने स्त्री शिक्षा से हाथ खींच लिया। माता भगवती १५ विधवा देवियों को पढ़ा लिखाकर उपदेशिका बनाना चाहती थी, परन्तु पूरा सहयोग न मिलने से कुछ न हो सका।

माई जी ने जालंधर, लाहौर, गुजराँवाला, गुजरात, रावलपिण्डी से लेकर पेशावर तक अपने प्रचार की धूम मचा दी थी। आर्य जन उनको श्रद्धा से सुनते थे। उनके भाई श्री राय चूनीलाल का उन्हें सदा सहयोग रहा। 'राय चूनीलाल' लिखने पर किसी को चौंकना नहीं चाहिये। जो कुछ लिखा गया है, सब प्रामाणिक है। माई जी संन्यासिन नहीं थीं। उनके चित्र को देखकर यह भ्रम दूर हो सकता है। वह हरियाना ग्राम की थीं, न कि होशियारपुर की। पंजाबी हिन्दी में उनके गीत तब सारे पंजाब में गाये जाते थे। सामाजिक कुरीतियों के निवारण में माई जी के गीतों का बड़ा योगदान माना जायेगा। मैंने ऋषि पर पत्थर मारने वाले पं. हीरानन्द जी के मुख से भी माई जी के गीत सुने थे। उनके जन्म ग्राम, उनकी माता, उनके भाई की चर्चा पत्र-पत्रिकाओं में पढ़ने को मिलती है, परन्तु पति व पतिकुल के बारे में कुछ नहीं मिलता। हमने उन्हीं के क्षेत्र के स्त्री शिक्षा के एक जनक दीवान बद्रीदास जी, महाशय चिरञ्जीलाल जी आदि से यही सुना था कि वे बाल विधवा थीं।

श्री रंगपा मंगीशः- ऋषि के प्रति आकर्षित होकर वेद के लिए समर्पित होने वाले उनके सच्चे पक्के भक्तों में रंगपा मंगीश की आर्य समाज में कभी भी कहीं भी चर्चा नहीं सुनी गई। वे दक्षिण भारत के प्रथम आर्य समाजी थे। यह भ्रामक विचार है कि धारूर महाराष्ट्र का आर्य समाज दक्षिण भारत का पहला आर्य समाज है। कर्नाटक आर्य समाज का इतिहास लिखते समय और फिर लक्ष्मण जी के ग्रन्थ पर कार्य करते हुए तत्कालीन कई पुष्ट प्रमाणों से यह सिद्ध किया जा चुका है कि मंजेश्वर ग्राम मंगलूर कर्नाटक के श्री रंगपा मंगीश दक्षिण भारत के पहले आर्य समाजी युवक थे। उनका दान परोपकारिणी सभा तक भी पहुँचता रहा। ऋषि दर्शन करके, उनके व्याख्यान सुनकर और संवाद करके वह युवक दृढ़ वैदिक धर्मी बना था। भारत सुदशा प्रवर्त्तक में उनकी मृत्यु का विस्तृत समाचार सन् १८९२ के एक अंक में हमने पढ़ा है। अभी कुछ दिन पूर्व ऋषि के पत्रों पर कार्य करते समय भी उनकी चर्चा पढ़ी, पर वह नोट न की गई। वेद भाष्य के अंकों में ग्राहकों में भी इनका नाम मिलेगा। आर्य समाज के इतिहास लेखकों ने तो कहीं मंगलूर के इस समाज की कतई चर्चा नहीं की।

चाँदापुर के शास्त्रार्थ विषयक प्रश्नः- उ.प्र. के दो तीन आर्य युवकों ने गत दिनों चलभाष पर चाँदापुर शास्त्रार्थ विषय में कुछ अच्छे प्रश्न पूछे। वे ऋषि मेले पर न पहुँच सके। आ जाते तो उनको नई-नई ठोस जानकारी दी जाती। **राहुल जी** ने भारत सरकार के रिकार्ड से एक Document (अभिलेख) खोज कर दिया है। इसमें चाँदापुर शास्त्रार्थ में महर्षि के विशेष योगदान की चर्चा है। वहाँ गोरे, काले पादरी व कई मौलवी पहुँचे। इस्लाम का पक्ष देवबन्द के प्रमुख मौलाना मुहम्मद कासिम ने रखा। पादरी टी.जे. स्काट भी बोले। राजकीय रिकार्ड में केवल ऋषि जी के नाम का उल्लेख है। यह अपने आपमें एक घटना है। आर्य समाज स्थापित हुए अभी दो वर्ष भी नहीं हुए थे कि ऋषि के व्यक्तित्व का लोहा गोराशाही ने माना।

चाँदापुर शास्त्रार्थ के सम्बन्ध में हमने तत्कालीन नये-नये स्रोत खोज कर इस पर नया प्रकाश डाला है। राधा स्वामी मत के तीसरे गुरु हुजूरजी महाराज की पुस्तक में इस विषय में बहुत महत्त्वपूर्ण नये व ठोस तथ्य हमें मिले हैं। वह उस युग के जाने माने लेखक थे। 'आर्य दर्पण' का वह अंक भी हमारे पास है, जिसमें यह शास्त्रार्थ छपा था।

शास्त्रार्थ हुआ ही क्यों?:- चाँदापुर में मेला पहले भी हुआ करता था। सन् १८७७ का मेला कोई पहली बार नहीं हुआ था। पादरी व मौलवी मेले पर आकर अपने-अपने मत का प्रचार किया करते थे। गये वर्ष के मेले में यह प्रसिद्ध हो गया कि मौलवी जीत गये और कबीर पंथी

हार गये। मुंशी इन्द्रमणि जी व ऋषि जी को मुंशी मुक्ताप्रसाद व मुंशी प्यारेलाल ने बचाव के लिए ही तो बुलवाया था। यह बात स्पष्ट रूप से राधास्वामी गुरुजी ने लिखी है। एक लेखक ने लिखा है कि इन दो बन्धुओं का झुकाव कबीरपंथ की ओर था। यह कोरी कल्पना है। वे तो कुल परम्परा से ही कबीर पंथी थे अत: यह हदीस गढ़न्त है। हरबिलास जी आदि का यह कथन सत्य है कि मुक्ताप्रसाद जी का झुकाव ऋषि की शिक्षा की ओर था। मेले के बाद दोनों बन्धु आर्य समाज से जुड़ते गये। इसके पुष्ट प्रमाण परोपकारिणी सभा तथा **श्री अनिल आर्य जी,** महेन्द्रगढ़ को सौंप दिये हैं।

सब बड़े-बड़े लेखकों ने (लक्ष्मणजी के ग्रन्थ में भी) यह लिखा है कि मौलवी व पादरी चाँदापुर पहुँचे। फिर कुछ लोगों ने ऋषि जी से कहा कि हिन्दू मुसलमान मिलकर ईसाइयों से शास्त्रार्थ करके इन्हें पराजित करें। प्रश्न यह भी पूछा गया है कि ये कुछ लोग कौन थे? हमारा स्पष्ट उत्तर है कि ऐसा मुसलमानों ने कहीं कहा था। पूछा गया है कि इसका प्रमाण क्या है? हमारा उत्तर है- बस तथ्य सुस्पष्ट हैं और प्रमाण क्या चाहिये? ईसाइयों को तो पराजित करने के लिए मिलकर शास्त्रार्थ करने को कहा गया था सो ये लोग ईसाई हो नहीं सकते थे। हिन्दुओं को विशेष रूप से कबीर पंथियों को मुसलमान बनाने के लिए मौलवी जोर मार रहे थे। चिढ़ा भी रहे थे। मुसलमानों से रक्षा के लिए हिन्दुओं ने ऋषि जी को बुलवाया था, सो हिन्दू अब मुसलमानों से मिलकर ईसाइयों को क्यों पछाड़ने की बात कहेंगे। बड़ा खतरा तो मुसलमान थे।

श्री शिवव्रतलाल (हजूरजी महाराज) के वृत्तान्त से और प्रसंग से पहले मौलवियों व पादरियों के आगमन की सबने चर्चा की है। इससे स्पष्ट है कि ''ये कुछ लोग'' मुसलमान ही थे। बिना प्रमाण के हमने कुछ नहीं लिखा है। दुर्भाग्य से भ्रमित करने वालों की हजूरजी महाराज की पुस्तक तक पहुँच नहीं है। हजूरजी मूलत: कबीरपंथी ही तो थे, सो वह सब कुछ जानते थे। थे भी उ.प्र. के। पूजनीय स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी आदि के उपदेश, आदेश सुनकर सप्रमाण लिखना मेरा स्वभाव बन चुका है। पक्षपात के रोग से ग्रस्त होकर बड़े जोर से मेरे लेख पर आपत्ति की गई कि मौलवियों या मुसलमानों ने ऋषि जी से कहाँ कहा था कि हिन्दू मुसलमान मिलकर ईसाइयों से शास्त्रार्थ करें? इस सोच के व्यक्ति क्या जानें कि श्री पंडित लेखराम जी ने अपने एक प्रसिद्ध ग्रन्थ में यही बात लिखी है। किसी की पहुँच हो तो पढ़ ले।

ऋषि के पत्रों में आता है:- पं. भगवद्दत्त शोध शताब्दी वर्ष में ऋषि के पत्रों में वर्णित महत्त्वपूर्ण बातों का विशेष प्रचार होना चाहिये। पण्डित जी ने ही लिखा है कि प्रत्येक दूसरे तीसरे पत्र में ऋषि देश-सेवा, देशोन्नति, देश-सुधार, देश की दुर्दशा व देश-कल्याण की बात करते हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्य भारतीय महापुरुषों के साहित्य में देशहित पर इतना नहीं लिखा गया। यह इन पत्रों की बहुत बड़ी विशेषता है। जी. वाईज के पत्रों का तो अपना ही महत्त्व है।

उन्नीसवीं शताब्दी के भारतीय महापुरुषों के जीवन व पत्र-व्यवहार में केवल ऋषि के पत्र-व्यवहार में उस काल के शिरोमणि क्रान्तिकारियों के अनेक पत्र मिलते हैं। श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा व वारहट कृष्णसिंह के कई पत्रों का होना हमारे लिए अत्यन्त गौरव का विषय है। हमने राजा राममोहनराय आदि के साहित्य में ऐसे पत्र नहीं पढ़े।

पत्र-व्यवहार के दूसरे भाग में पृष्ठ ४९७ पर 'गुप्त समाचार' पर हम जितना भी लिखें, थोड़ा है। यह देश, जाति के लिए ऋषि की अन्त:वेदना का चित्र है। इस भाग के पृष्ठ ६६५ पर श्रद्धाराम फिलौरी का ऋषि के नाम ऐतिहासिक पत्र इतिहास का एक दुर्लभ दस्तावेज है। इसने तो इतिहास को ही उलट कर रख दिया है। श्रद्धाराम के मन में ऋषि के प्रति इतनी श्रद्धा! ऋषि के उर के उद्‌गार विचार भी पत्रों से आगे दिये जायेंगे।

मुझसे यह बड़ा पाप हुआ:- परोपकारी में थोड़ा समय पहले ही यह लिखा था कि श्री महात्मा हंसराज का एक कथन पढ़ते ही मेरे हृदय पर अंकित हो गया। ला. साईंदास के मुख से आपने यह सुना था कि एकेश्वरवाद, 'उसी की ही उपासना करनी योग्य' के विषय में ऋषि का व्याख्यान सुनकर श्रोता घरों के लिये निकल रहे थे। ऋषि ने मूर्त्तिपूजा का तीक्ष्ण तर्कों से खण्डन किया। एक श्रोता जो ब्रह्मसमाज के नेता थे। वे यह कहते हुए सुने गये, ''मेरा अब तक सारा जीवन ही व्यर्थ गया। मैंने तो कभी जड़पूजा का ऐसा कड़ा खण्डन नहीं किया।''

महात्मा जी के ये शब्द मुझे कुल्लियाते आर्य मुसाफिर का सम्पादन करते हुए स्मरण हो आये। सृष्टि का इतिहास जैसी खोजपूर्ण विचारोत्तेजक पुस्तक पढ़कर मेरे मन में आया कि मेरा नाम पण्डित लेखराम जी पर सर्वाधिक लिखने व बोलने वालों में इतिहास केसरी पं. निरञ्जनदेव जी लिया करते थे। इस पुस्तक को अब गम्भीरता से पढ़ा तो मेरे मुख से भी ला. काशीराम जी प्रधान पंजाब ब्राह्मसमाज जैसे शब्द निकले- मुझसे भी बहुत बड़ा पाप हुआ जो पण्डित जी पर लिखते बोलते हुए मैंने कभी इस पुस्तक पर न तो धारदार लेखनी चलाई और न कोई स्मरणीय भाषण ही दिया। यह तो ठीक है कि श्री अमर स्वामी जी, पं. शान्ति प्रकाशजी व पं. निरञ्जनदेव जी के पश्चात् मैं ही इसकी कुछ चर्चा करता आया हूँ, परन्तु इसकी गरिमा के अनुरूप इसका प्रचार नहीं किया।

रक्तसाक्षी पं. लेखराम ग्रन्थ में जालंधर की एक घटना खोज कर दी गई है। एक शङ्कराचार्य की चुनौती स्वीकार कर महात्मा नित्यानन्द जी व पं. लेखराम जालंधर पधारे। सामने किसको आना था? तब मूर्त्तिपूजा के इतिहास पर जो पण्डित जी का व्याख्यान हुआ तो पत्रों में यह छपा मिलता है कि इस समय देश भर में पं. लेखराम जी से बढ़कर इतिहास को जानने वाला विद्वान् मिलना अति कठिन है। आर्य समाज के लोगों में भी गत सत्तर वर्षों में पं. लेखराम के प्रति कुछ ऐसी ही धारणा बनती गई कि उन्होंने विधर्मियों से शास्त्रार्थ किये। जाति रक्षा में प्राण दिये। बस! उनके जीवन के अन्य-अन्य पक्ष सब विलुप्त कर दिये । परोपकारिणी सभा, श्री यशवन्त जी तथा प्रिय लक्ष्मण जी की मण्डली ने समय रहते इस सेवक को यह सेवा सौंपकर प्रायश्चित्त करने का शुभ अवसर दिया है।

अवतारवाद पर उपाध्यायजी का मौलिक तर्कः- परोपकारी में मान्य **सत्यजित् जी** तथा श्रीमान् **सोमदेव जी** समय-समय पर शंका समाधान करते हुए बहुत पठनीय प्रमाण व ठोस युक्तियाँ देते रहे हैं। मान्य श्री **सोमदेव जी** तथा अन्य वैदिक विद्वानों से निवेदन किया था कि भविष्य में अपने पुराने पूजनीय विचारकों, दार्शनिकों का नाम ले लेकर उनके मौलिक चिन्तन व अनूठे तर्कों का आर्य जनता को लाभ पहुँचायें। इससे अपने पूर्वजों से नई पीढ़ियों को प्रबल प्रेरणा प्राप्त होगी। आज अवतारवाद विषयक पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय का एक सरल परन्तु अनूठा तर्क दिया जाता है।

किसी वस्तु में जब परिवर्तन होता है, तो वह पहले से या तो उन्नत होती है, बढ़िया बन जाती है और या फिर उसमें ह्रास होता है। वह पहले से घटिया हो जाती है। इसके नित्य प्रति हमें नये-नये उदाहरण मिलते हैं। शिशु से बालक, बालक से जवान और जवानी से बुढ़ापा-सब इस नियम के उदाहरण हैं। घर का सामान टूटता-फूटता है, मरम्मत होती है, तो दोनों प्रकार के उदाहरण मिल जाते हैं।

परमात्मा जब अवतार लेता है, तो अवतार धारण करके वह प्रभु पहले से बढ़िया बन जाता है, अथवा कुछ बिगड़ जाता है। दोनों स्थितियाँ तो हो नहीं सकतीं। पहले की स्थिति रह नहीं सकती। कुछ भी हो, प्रत्येक स्थिति में वह प्रभु पूर्ण परमानन्द तो नहीं कहा जा सकता। प्रभु अखण्ड एक रस तो न रहा। यह तर्क इस लेखक ने आज से ६१ वर्ष पूर्व पढ़ा था। कभी कोई अवतारवादी इसके सामने नहीं टिक पाया।

कोई ४५ वर्ष पूर्व केरल के कोचीन नगर में इस सेवक को व्याख्यान देना था। केरल के स्वामी दर्शनानन्द जी तब युवा अवस्था में थे। वह श्रोता के रूप में व्याख्यान सुन रहे थे। अवतारवाद को लेकर तब एक तर्क यह दिया कि राम, कृष्ण आदि सभी अवतार भारत में ही आये हैं। जर्मनी, इरान, जापान, मिस्र, सीरिया व अरब आदि देशों में आज तक कोई अवतार नहीं आया। जब-जब धर्म की हानि होती है और पाप बढ़ता है, भगवान् अवतार लेते हैं। अवतारवाद के इतिहास से तो यह प्रमाणित होता है कि भारत ऋषि भूमि-पुण्य भूमि न होकर पाप भूमि है। क्या यह कोई गौरव की बात है? जापान पर दो परमाणु बम गिराये गये। लाखों जन क्षण भर में मर गये। भगवान् ने वहाँ अवतार लिया क्या? भारत का विभाजन हुआ। लाखों जन मारे गये। कोई अवतार प्रकट हुआ? यह तर्क सुनकर पीछे बैठे स्वामी श्री दर्शनानन्द जी फड़क उठे। वह दृश्य आज भी आँखों के सामने आ जाता है।

यह हीनभावना व भीरुता थीः- पुराने आर्य समाजी मण्डन के लिए तत्पर रहते थे, तो वेद विरोधी मतों के आक्षेपों व अंधविश्वासों के खण्डन में भी प्रमाद नहीं करते

थे। पं. बुद्धदेव जी उन आर्यों की भावना की अभिव्यक्ति ऐसे किया करते थे-

जरा छेडे से मिलते हैं, मिसाले ताले तम्बूरा
मिला ले जिसका जी चाहे, बजाले जिसका जी चाहे।

हमारे देखते-देखते अंग्रेजी राज के जाते दासता की हीन भावना व भीरूता ने अपना चमत्कार दिखाया। अंग्रेजी पठित वर्ग व पश्चिमी गोरों की अनाप-शनाप का उत्तर देते हुए उनके प्रशंसक भक्त लेखकों ने हीन भावना व भीरुता के कारण चुप्पी साध ली। जोन्स की पुस्तक Arya Dharma की अनर्थकारी बातों या इतिहास प्रदूषण पर उनके गुणगान करने वाले आर्य समाज में मौन बैठे रहे। पं. लेखराम जी ऋषि के देहत्याग की वेला में अजमेर नहीं गये थे, यह कथा असत्य है। भाई जवाहरसिंह परोपकारिणी सभा के उप प्रधान रहे, यह भी तथ्य नहीं है। पं. श्रद्धाराम महर्षि के विरोध में निरन्तर जुटे रहे, यह भी मिथ्या कथन है। ऋषि के पत्र-व्यवहार में अब तो महर्षि के नाम श्रद्धाराम फिलौरी का पत्र छप चुका है। अंग्रेज अथवा गोरे लेखकों की माला फेरने वालों ने ये सब कुछ पढ़ा, परन्तु हीन भावना के कारण इन भयभीत लोगों ने सत्य की रक्षा के लिये एक भी पंक्ति नहीं लिखी।

पं. लेखराम १८८७ से सन् १८९० तक आर्य गजट के सम्पादक रहे। यह भी तो विशुद्ध गप्प है। पं. लेखराम जी सन् १८८८ में ऋषि जीवन की सामग्री की खोज में 'आर्य मुसाफिर' बन चुके थे। क्या आर्य समाज में 'शोध' की रागिनी छेड़ने वालों को इस अनर्थ पर चुप्पी तोड़ने के लिये उनकी नैतिकता ने नहीं झकझोरा?

दो पत्र आये:- करने के लिये अनेक कार्य हैं। समय भाग रहा है। मारिशस से श्री पं. सत्यप्रकाश जी ने एक अलभ्य शास्त्रार्थ विषयक पत्र भेजा। उनका उत्तर न दिया जा सका। इसका बहुत खेद है। उन्होंने कुछ पूछा, परन्तु उसकी कोई प्रति अभी तक नहीं मिली। यह बहुत प्रसन्नता की बात है कि आपने इस पुस्तक को अंग्रेजी में अनूदित कर दिया है।

श्री पं. रणवीर जी सिकन्दराबाद में एक निष्ठावान् उत्साही विद्वान् युवक हैं। इस बार सपरिवार ऋषि मेले पर आये। आपने एक महत्त्वपूर्ण विषय पर एक ग्रन्थ लिखने की प्रबल प्रेरणा दी है। भले ही व्यस्ततायें बहुत हैं, परन्तु दक्षिण के बलिदानी दिलजले आर्यों के नाम पर सौंपा गया कार्य अप्रैल मास में सर्दी के जाने पर आरम्भ हो जायेगा। ऋषि ऋण जितना चुकता हो जाये, अच्छा ही है। यही इस विनीत का प्रयास है। नई पीढ़ी काम ले रही है। यह सौभाग्य है।

हमारा गौरव-हमारी विभूतियाँ:- परोपकारी परिवार के एक प्रतिष्ठित सदस्य आर्य जाति के एक ज्ञानवृद्ध वयोवृद्ध नब्बे वर्षीय आयुर्वेद के उपासक श्री डॉ. स.ल.वसन्त जी फाजिल्का हैं। आप चार प्रदेशों में विश्वविद्यालयों व आयुर्वेद विभाग में ऊँचे-ऊँचे पदों पर सेवा कर चुके हैं। आप पंजाब के फाजिल्का नगर में रहते हैं। श्री धर्मवीर जी, आचार्य सोमदेव जी को और इस विनीत को प्राय: भावपूर्ण पत्र लिखते रहते हैं। वे करते क्या हैं? आप प्रात: से सायंकाल तक प्रणव जप, उपासना व वेद का स्वाध्याय करते रहते हैं। परोपकारी का पारायण ध्यान से करते हैं। अजमेर से वेद भाष्य मँगवाकर दो का स्वाध्याय पूरा करके तीसरे का स्वाध्याय करने में श्रम कर रहे हैं। पानीपत से मेरी पुत्री का परिवार उनके दर्शनार्थ गया। मैं साथ था। अभिवादन करके जब बैठ गये, तो मेरी पुत्री के पति श्री डॉ. धर्मदेव ने यह समझा कि नब्बे वर्षीय डॉ. वसन्त जी को अब बुलाया जायेगा।

वार्त्तालाप आरम्भ हुआ, तब वह समझे कि जो नयनक के बिना वेद भाष्य का गम्भीर अध्ययन कर रहे थे, जिनके चेहरे पर झुरियों का कोई चिह्न नहीं और जिनको ठीक सुनाई देता है, नित्य प्राणायाम व्यायाम करने वाली आर्य विभूति यही डॉ. स.ल. वसन्त जी हैं। अब जनता की सोच यह है कि जो बहुत धनवान हो, सत्ताधारी दल से जुड़ा हो, वह देश व समाज की विभूति व गौरव है। जिनकी सोच, व्यवहार व आचरण सबके लिए एक आदर्श है, श्री डॉ. वसन्त जैसे सब तपस्वी पुरुष आर्यसमाज के गौरव हैं। वे कोई धंधा नहीं करते। देश, विदेश से उनकी प्रतिभा को जानने वाले चलभाष पर स्वास्थ्य के बारे में उनका परामर्श लेते हैं। वे रोगियों के लिए द्वार खोल दें तो आज लाखों कमा लें। परोपकारिणी सभा की गतिविधियों की पूरी जानकारी रखते हैं। अपने सुझाव भी सभा को देते रहते हैं।

- वेद सदन, अबोहर, पंजाब-१५२११६

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर

दिनांक : १२ से १९ जून, २०१६

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों–बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।
३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
६. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखना, पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा सर्दी, खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।
८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
९. किसी भी मादक द्रव्य, चाय–कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।
१०. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।
११. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ–मन्त्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता–बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्–पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है।

ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ अन्यथा यहाँ भी क्रय किया जा सकता है। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

-संयोजक

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें अन्यथा व्यक्ति के नाम से शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। परोपकारिणी सभा आप सभी का सहयोग चाहती है।

यू-ट्यूब पर वीडियो प्रवचन उपलब्ध

वेद एवं आर्ष साहित्य में रुचि रखने वाले आर्यजगत् एवं धार्मिक जनों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि अब यू-ट्यूब पर अनेक वैदिक आर्य विद्वानों के सैंकड़ों नये-नये प्रवचन उपलब्ध हैं। विश्व में कहीं पर भी इन्टरनेट से जुड़ कर ये प्रवचन नि:शुल्क सुने-देखे तथा डाउनलोड किये जा सकते हैं। आप जहाँ भी हैं, यदि आपको वैदिक आर्ष ज्ञान की पिपासा है, वेद एवं आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय के साथ आप इन पर विद्वानों के प्रवचन भी सुनना चाहते हैं, तो इन्टरनेट से जुड़ कर सरलता से सुन सकते हैं।

इसके लिए you tube पर जाकर playlist of paropkarini sabha लिख कर सर्च करें, तो आपको अनेक प्लेलिस्ट मिलेंगी, यथा- वेद प्रवचन, योग दर्शन, ईशोपनिषद् आदि। इनमें इच्छानुसार जाकर लाभ उठाया जा सकता है। आप अपने परिचितों को यह सूचना देकर उन्हें भी लाभ उठाने को प्रेरित कर सकते हैं। भविष्य में अन्य भी नये-नये प्रवचन इस सूची में उपलब्ध कराये जाते रहेंगे।

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगांठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय जन्म तिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नगद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

जैसे मेघ वर्षा समय में अपने जल के समूह से सब पदार्थों को तृप्त करता हुआ उन्नति देता है वैसे ईश्वर भी योगाभ्यास करने वाले योगी पुरुष के योग को अत्यन्त बढ़ाता है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.४०

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

पुनरुत्थान युग का द्रष्टा

- स्व. डॉ. रघुवंश

कीर्तिशेष डॉ. रघुवंश हिन्दी-जगत् के जाने-माने विद्वान् थे। वे हिन्दी-संस्कृत-अंग्रेजी के परिपक्व ज्ञाता तो थे ही, भारत की शास्त्रीयता और उसके इतिहास के अनुशीलन में भी उनकी विपुल रुचि और गति थी। उन्होंने साहित्य के विभिन्न पक्षों पर साहित्य-सर्जन कर अपनी मौलिक प्रतिभा का परिचय दिया। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अध्यक्ष और समर्थ लेखक के रूप में वे सर्वमान्य रहे। अपने अग्रज श्रीमान् यदुवंश सहाय द्वारा रचित 'महर्षि दयानन्द' नामक ग्रन्थ की भूमिका-रूप में लिखे गए उनके इस लेख से हमारे ऋषिभक्त पाठक लाभान्वित हों, अत: इसे हम उक्त ग्रन्थ से साभार उद्धृत कर रहे हैं। - **सम्पादक**

पिछले अंक का शेष भाग.....

विवेकानन्द ने, और बहुत कुछ गाँधी ने भी यह माना है कि भारतीय संस्कृति का स्वर आध्यात्मिक है। भारतीय जीवन में आध्यात्मिक मूल्यों को अधिक मान मिला है। विवेकानन्द के अनुसार यदि भारत को पश्चिम के विज्ञान और प्रविधि की आवश्यकता है तो पश्चिम को अपने सन्तुलित विकास के लिए भारतीय आध्यात्मिक मूल्यों की अपेक्षा है। और गाँधी के अनुसार भारत को नई समाज-रचना के लिए अपनी आध्यात्मिक मूल्यों की नई वैज्ञानिक उद्भावना द्वारा समस्त आधुनिक समाजतंत्र, राजतंत्र और अर्थतंत्र के मूल्यों को नया रूप प्रदान करना है। ये मूल्य भारतीय समाज-रचना का आधुनिकीकरण करने में सहायक होंगे और यह नया समाज व्यक्ति को समत्व और स्वाधीनता का वास्तविक मूल्य-बोध प्रदान करेगा। साथ ही पश्चिमी संस्कृति उन मूल्यों के आधार पर अपने संकट और संत्रास से मुक्त होकर नये भविष्य की संभावना से प्रेरित हो सकेगी। यहाँ ध्यान देने की बात है कि विवेकानन्द ने भारतीय अध्यात्म के अद्वैत तत्त्व पर बल दिया है और गाँधी ने वैष्णव भावना को महत्त्व प्रदान किया है। ये दोनों तत्त्व भारतीय दर्शन, साधना और अध्यात्म के उच्चतम स्वरूप का परिचय दे सकते हैं, परन्तु सम्पूर्ण भारतीय मानस को इन तत्त्वों ने एकांगी और लोकनिरपेक्ष भी बनाया है। इनके आधार पर व्यक्ति साधना की उच्चतम भूमिओं में भले ही प्रवेश करता हो, पर लौकिक जीवन के विकास और समृद्धि के लिए अपेक्षित चरित्र-बल और आत्म-विश्वास उनसे जनता को प्राप्त नहीं हो सका। अधिक से अधिक सामाजिक जीवन के आचार तथा नैतिकता को आध्यात्मिक जीवन की अपेक्षा में महत्त्व मिला, परन्तु जब आत्मा और ब्रह्म में अभेद प्रतिपादित किया जाता हो, अथवा भक्त को सम्पूर्णत: अपने समस्त कर्मों को अपने प्रभु के प्रति समर्पण करना है, ऐसी स्थिति में समस्त सामाजिक दायित्व असंगत हो जाते हैं। यह अवश्य है कि विवेकानन्द और गाँधी दोनों ने इन आध्यात्मिक तत्त्वों की व्याख्या में समाज-सेवा, परस्पर प्रेम और सहयोग आदि को स्थान दिया है, परन्तु जिस परम्परा से इन तत्त्वों का गहरा सम्बन्ध रहा है, इन तत्त्वों की स्वीकृति के साथ उस परम्परा की स्थापना तथा स्वीकृति ही अधिक हो सकी, समाज-सेवा, लोक-कल्याण, प्रेम-सहयोग आदि अधिकाधिक गौण होते गये हैं। आज के अवसरवादी समाज में भजन-कीर्तन और योग आदि की जितनी प्रतिष्ठा बढ़ी, प्रेम-सेवा आदि उतने ही उपेक्षणीय होते गये हैं।

इस दृष्टि से दयानन्द का भारतीय समाज का ज्ञान अधिक गहरा था और उनका भारतीय सांस्कृतिक परम्परा का अध्ययन अधिक पूर्ण माना जा सकता है। दयानन्द में प्रखर प्रतिभा और गहरी अन्तर्दृष्टि थी। साथ ही उनमें मानवीय संवेदना की बहुत व्यापक और आन्तरिक क्षमता थी, इसलिए **घर से बाहर निकलने के बाद लगभग चौबीस वर्ष उन्होंने देश के स्थान-स्थान पर घूमने में बिताये और सारे भारतीय जन-समाज का बहुत व्यापक अनुभव प्राप्त किया।** अपनी सूक्ष्म संवेदना के कारण ही उनको भारतीय समाज के जीवन का यथार्थ ज्ञान हो सका। भारतीय जन-समाज की विकृत, कुंठित, जड़ित और गतिरुद्ध स्थिति को देखकर उनका मन पीड़ा, दु:ख और करुणा से अभिभूत हो गया। यह एक ऐतिहासिक संयोग

ही कहा जायगा कि गौतम संसार के कष्ट, पीड़ा, दु:ख-दर्द और जरा-मरण को देखकर इनसे मुक्त होने के उपाय की खोज में घर से निकले और बुद्ध ने अन्तत: पाया व्यक्ति के निर्वाण का मार्ग। पर मूलशंकर घर से निकले थे, संसार के बन्धनों से मुक्त होकर शुद्ध स्वरूप शिव की खोज में और दयानन्द को मिला दु:खी, संतप्त व हीन-भाव से ग्रस्त, अनेक कुरीतियों, पाखण्डों और दुराचारों से पीड़ित, कुंठित, गतिरुद्ध भारतीय समाज। और फिर वे व्यक्तिगत मोक्ष के मार्ग को भूलकर अपने समाज के उद्धार में प्राण-पण से लग गये। न कोई गौतम बुद्ध को अपने मार्ग से विचलित कर सका और न स्वामी दयानन्द को ही कर सकता था।

दयानन्द की संवेदन-क्षमता के समान उनकी विवेक-बुद्धि बहुत प्रखर थी। उन्होंने भारतीय समाज की यथार्थ स्थिति का जितना मार्मिक अनुभव प्राप्त किया, उतनी ही गहराई से उन्होंने इस समाज के अध:पतन के कारणों का विवेचन-विश्लेषण किया। भारतीय समाज की धारावाहिक परम्परा का बहुत सटीक विश्लेषण उन्होंने किया है और उसके द्वारा वे ठीक निदान भी कर सके हैं। स्मरणीय है दयानन्द स्वामी विरजानन्द के पास पढ़ने के लिए मथुरा जब पहुँचे तो उनकी अवस्था लगभग सैंतीस-अड़तीस वर्ष की थी। इस प्रकार चालीस वर्ष की अवस्था तक दयानन्द विभिन्न शास्त्रों, दार्शनिक सिद्धान्तों और आध्यात्मिक साधनाओं के अध्ययन और अभ्यास में लगे रहे थे। एक ओर उनको तत्कालीन भारतीय समाज की यथार्थ स्थिति का सही ज्ञान था, तो दूसरी और भारतीय संस्कृति का उन्होंने मन्थन भी किया था। स्वामी विरजानन्द ने आर्य ग्रन्थों और वैदिक संस्कृति की ओर उनका ध्यान आकर्षित करके उनको दिशा-निर्देश दिया था। अपने परिभ्रमण काल में दयानन्द ने यह अनुभव किया था कि देश के समाज को अवरुद्ध करने वाला वर्ग पौराणिकों, पुरोहितों, साम्प्रदायिकों तथा महन्तों का है। यह इतना बड़ा निहित स्वार्थों का वर्ग बन गया है, जो अपनी शक्ति में बहुत व्यापक और समर्थ है। सामाजिक जीवन में जितने अन्धविश्वास, कुरीतियाँ, नृशंसताएँ और अन्याय फैले हुए हैं, उनके पीछे इसी वर्ग का समर्थन है। उन्होंने इस बीच भारतीय दर्शन, धर्म, अध्यात्म, आचार-शास्त्र और साधना का गहरा अध्ययन और अभ्यास किया था। इसके माध्यम से उन्हें भारतीय संस्कृति की मूल धारा की स्वच्छन्दता, गतिशीलता और मौलिकता की सही पहचान भी हुई। अपनी संस्कृति के उच्चतम मूल्यों के अनुभव और साक्षात्कार से उनके मन में यह प्रश्न बार-बार उमड़ता-घुमड़ता रहा कि इस महान् संस्कृति के देश और समाज की पतनावस्था का कारण क्या है? जिस जाति ने जीवन के उच्चतम मूल्यों की उपलब्धि की, व्यक्ति और समाज तथा व्यावहारिक और आध्यात्मिक जीवन के समन्वय तथा सामंजस्य की श्रेयस्कर भूमिकाएँ प्रस्तुत की हैं, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्रों की सुन्दर व्यवस्थाएँ दी हैं, उस जाति की ऐसी दीन-हीन अवस्था का कारण क्या है? ऐसे शक्तिशाली और समर्थ मानस की ऐसी कुंठित, गतिरुद्ध और विवेकहीन अवस्था क्यों हो गई है?

स्वामी विरजानन्द ने दयानन्द का ध्यान अनार्ष ग्रन्थों की ओर से हटा कर, आर्ष ग्रन्थों की ओर आकर्षित किया। उस प्रज्ञाचक्षु संन्यासी ने यह समझ लिया था कि वैदिक काल के बाद के ब्राह्मण और पुरोहित वर्ग ने स्वार्थवश और शक्ति को प्रतिद्वंद्विता में शुद्ध आर्ष ग्रन्थों की मनमानी टीकाएँ और व्याख्याएँ की हैं, अनेक समानान्तर ग्रन्थों की रचना की है। इन संहिताओं, स्मृतियों, उपनिषदों और पुराणों में अपने स्वार्थ-सिद्धि के नियमों और सिद्धान्तों का समाहार किया। किया ही नहीं, मनमाने ढंग से आर्ष ग्रन्थों में प्रक्षेप भी किये गये। इसलिए उन्होंने दयानन्द को विदा देते समय यही गुरु-दक्षिणा माँगी कि भारतीय संस्कृति के स्रोतों का आर्ष ग्रन्थों में अनुसन्धान करके भारतीय जन-समाज को पुन: एकत्रित और गतिशील करो। इस दिशा को पाकर दयानन्द ने भारतीय समाज के पुनर्जागरण का जो मार्ग प्रशस्त किया है, और उसके लिए जिन सिद्धान्तों और मूल्यों की विवेचना की है, वे उनकी दिव्य-दृष्टि का परिचायक हैं। उन्होंने भारतीय समाज का यथार्थ साक्षात्कार किया, उसकी दीनावस्था के ऐतिहासिक-सांस्कृतिक कारणों का वैज्ञानिक विवेचन किया और अपने युगीन-परिवेश के अनुकूल समाज की नई रचना के लिए मार्ग दिखाया। क्योंकि उन्होंने सम्पूर्ण भारतीय समाज से अपना तादात्म्य स्थापित किया था, इस समाज की पहचान उनकी सही

थी। उन्होंने पूरी आत्मीय संवेदना के साथ अपने समाज की पीड़ा-व्यथा को ग्रहण किया था, अत: उनमें समाज के प्रति गहरा आन्तरिक भाव था, उसके उद्धार के लिए जीवन भर वे पूरी तन्मयता के साथ लगे रहे। दयानन्द ने बार-बार अनेक अवसरों पर घोषित किया है कि अपने समाज के उत्थान और सेवा-कार्य के सम्मुख, वे अपने निजी आत्मोद्धार और मोक्ष को कुछ भी महत्त्व नहीं देते। इस कार्य को वे अगले जन्मों के लिए स्थगित कर सकते हैं, पर उनका जीवन पूर्णत: अपने समाज के लिए उत्सर्ग है। उनका सम्पूर्ण जीवन और अन्त में मृत्यु भी इसका प्रमाण है। उनके सामने एक मात्र लक्ष्य था-भारतीय समाज का उत्थान, भारतीय मानस की मुक्ति।

स्वामी दयानन्द के सामने बड़ा सवाल था कि भारतीय संस्कृति के परस्पर विरोधी तत्त्वों का समाधान किस प्रकार हो? उन्होंने देखा कि एक ओर इस संस्कृति में मानव जीवन और समाज के उच्चतम मूल्यों की रचनाशीलता परिलक्षित होती है, और दूसरी ओर उसमें मानवता विरोधी, समाज के शोषण को समर्थन देने वाले, अन्धविश्वासों का पोषण करने वाले विचार भी पाये जाते हैं, अत: उनके मन को उद्वेलित करने वाली बात थी कि हमारी सांस्कृतिक मूल्य-दृष्टि की प्रामाणिकता क्या है? कहा जा सकता है कि सत्य के लिए, मानव मूल्यों की प्रतिष्ठा के लिए प्रामाणिकता की आवश्यकता क्या है? गाँधी को अपने सत्य के लिए किसी धर्म-विशेष के ग्रन्थ की प्रामाणिकता की आवश्यकता नहीं हुई। यहाँ दो बातों की ओर ध्यान देना चाहिए। दयानन्द के युग में पश्चिमी संस्कृति की बड़ी आक्रमक चुनौती थी। यूरोप में १९ वीं शती से विज्ञान और नये मानववाद के प्रभाव से मध्ययुगीन धर्म की उपेक्षा की जा रही थी, और मध्ययुगीन आस्था के स्थान पर बुद्धि और तर्क का आग्रह बढ़ा था, परन्तु भारत में यूरोप के मध्ययुगीन धर्म को विज्ञान और मानववाद के साथ आधुनिक कहकर रखा जा रहा था। धर्म को अपने प्रभाव को बढ़ाने और सत्ता को स्थायी बनाने में इस्तेमाल किया जा रहा था। अत: भारतीय संस्कृति की ओर से इस चुनौती को स्वीकार करने में भारतीय अध्यात्म के वैज्ञानिक तथा मानवतावादी स्वरूप की स्थापना आवश्यक थी। फिर भारतीय अध्यात्म को इस रूप में विवेचित करने के लिए आधार रूप प्रामाणिकता की अपेक्षा थी। गाँधी को इस बात की सुविधा थी कि उनके पहले भारत के धर्म, अध्यात्म तथा संस्कृति के समन्वयात्मक रूप की प्रतिष्ठा हो चुकी थी। दूसरे, दयानन्द को भारतीय परम्परा के जिन पुराणपंथियों, पुरोहितों और महन्तों का विरोध करना था, वे परम्परा की प्रामाणिकता की दुहाई देकर जनता के जीवन को पतन के गर्त में ढकेलते आये थे। भारतीय जनता प्रामाणिकता की अभ्यस्त बना दी गई थी, चाहे वे प्रमाण उसके लिए कोई अर्थ न रखते हों। इस निहित स्वार्थ के वर्ग के गढ़ को ध्वस्त करने के लिए दयानन्द भारतीय संस्कृति के स्रोत की खोज में प्रामाणिक आधार पाने के लिए बेचैन थे।

वे स्वयं इस बात का अनुभव कर रहे थे कि भारतीय समाज को इस अवस्था में पहुँचाने का कार्य यहाँ के ब्राह्मण, पुरोहित, पौराणिक तथा साम्प्रदायिक वर्ग ने अपने स्वार्थ-साधन के लिए किया है। उन्होंने देखा कि यहाँ विभिन्न धर्म सम्प्रदायों के कर्मकाण्ड, दार्शनिक मान्यताएँ, साधना-पद्धतियाँ अन्तत: साम्प्रदायिकों, गुरुओं, महन्तों के स्वार्थ-साधन में सहायक हैं। इस प्रकार मौलिक धर्म, दर्शन, अध्यात्म और साधना में जितना विकास परिलक्षित होता है, उसका उपयोग सामाजिक जीवन को अन्धविश्वासी, निष्क्रिय और जड़ बनाने के लिए ही हुआ है। अद्वैतवाद जैसे दार्शनिक सिद्धान्त चिन्तन के स्तर पर जैसे भी हों, पर वे जन-समाज के जीवन को कर्म, दायित्व, सेवा जैसे मूल्यों से निरपेक्ष करने वाले हैं। योग का मध्ययुगीन विकृत रूप इसी प्रकार जन समाज में अनेक गुह्य और रहस्य साधनाओं के प्रचार का कारण बना। ये साधनाएँ भ्रष्टाचार, अनैतिकता, असामाजिकता का कारण बन गईं। मध्ययुग की प्रेम-साधना और भक्ति ने सामाजिक जीवन को व्यक्तिगत भावावेश का विषय बना दिया। पौराणिक धर्म ने आध्यात्मिक जीवन की उपलब्धियों को सरल बना दिया, सामाजिक कर्म और दायित्व को इस प्रकार गौण बना दिया गया । **नाम लेने मात्र से पापियों का उद्धार हो जाता है, तीर्थ-व्रत-स्नान से मुक्ति मिलती है, मूर्ति-पूजन से ईश्वर-भक्ति होती है, आदि ऐसे सरल उपाय बताये गये, जिनके सामने ज्ञान-विवेक-कर्म की उपेक्षा**

की जाने लगी। इस प्रकार दयानन्द ने देखा कि मध्य-युग के पुराण-पंथियों ने व्यक्तिगत साधनाओं पर बल देकर सामाजिक जीवन को विशृंखल कर दिया है, व्यक्ति और समाज के सन्तुलन को बिगाड़ दिया और ज्ञान-कर्म-भाव के सामंजस्य को नष्ट कर दिया है।

इसी ऊहापोह में दयानन्द ने समझ लिया कि वेद और वैदिक-साहित्य तथा अन्य आर्ष ग्रन्थों के प्रमाण के आधार पर इस समस्या का समाधान किया जा सकता है। सामान्यत: भारतीय दर्शन, धर्म तथा अध्यात्म आदि से सम्बन्धित सभी सिद्धान्त अथवा सम्प्रदाय वेदों को प्रमाण मानते आये हैं। **वेदों को प्रमाण मानने की परम्परा भारत में इस सीमा तक स्वीकृत रही है कि एक-दूसरे से विरोधी मत समान रूप से वेदों को प्रमाण मान कर चलते हैं।** वेदों के प्रामाण्य की इतनी सुदृढ़ परम्परा के पीछे कोई न कोई तार्किक विवेक सम्मत आधार चाहिए। स्वामी विरजानन्द से वेदों के सच्चे अर्थ तक पहुँचने का दिशा-निर्देश मिल सका था। दयानन्द अपने विवेक से यह मानने को तैयार नहीं थे कि वेद, जिसका साधारण सहज अर्थ ही ज्ञान है, केवल मंत्र-शक्ति से अभिमंत्रित मन्त्रों के संकलन हैं। निश्चय ही सायण वेदों के बहुत बाद के भाष्यकार हैं, उनके समय तक वेदों के अध्ययन की परम्परा समाप्त हो चुकी थी। इसी प्रकार पश्चिमी दृष्टि से धर्मगाथा, नृतत्त्व और समाजशास्त्र आदि के आधार पर वेदों को धर्म और अभिव्यक्ति का प्रारम्भिक रूप मानना भी असंगत है। यह पश्चिमी चिन्तकों और शास्त्रों की अपनी सीमा है। **भारतीय ज्ञान की समर्थ परम्परा में वेदों की जो मान्यता और प्रामाणिकता रही है, उसको देखते हुए पश्चिमी विद्वानों के द्वारा प्रस्तुत वेदों की व्याख्या बचकानी लगती है।** दयानन्द के अनुसार वेद यदि ज्ञान के भण्डार हैं, अन्य दर्शनों के लिए तथा भारत के महान् चिन्तकों के लिए प्रामाण्य हैं, ऋषियों और द्रष्टाओं के द्वारा उनके मन्त्रों का साक्षात्कार किया गया है, तो उनके मन्त्रों का संगत अर्थ होना चाहिए, **उनकी अर्थ और भाव की व्यंजनाओं में ज्ञान, अनुभव और मूल्यों की श्रेष्ठ तथा उच्चतम भूमियाँ लक्षित होनी चाहिए।** अरविन्द ने दयानन्द की वेद-सम्बन्धी दृष्टि पर विचार करते समय स्पष्ट शब्दों में घोषित किया है कि वेदों की व्याख्या के बारे में उनका दृष्टिकोण ही मात्र सही दृष्टिकोण है, अन्यथा भारतीय परम्परा में वेदों की महिमा का आधार ही क्या है?

स्वामी दयानन्द 'वेद' को ज्ञान मानते हैं, अत: उनका उद्घोष था कि यदि 'वेद' सत्य-ज्ञान के आदि स्रोत हैं, जैसा कि सभी भारतीय ज्ञान और शास्त्र की परम्पराएँ स्वीकार करती हैं, तो उनमें मानवीय ज्ञान का विवेक-संगत स्वरूप सुरक्षित है, जिसकी स्पष्ट और सुसम्बद्ध व्याख्या की जा सकती है। उनके अनुसार जो यह मानते हैं कि वेद के मन्त्रों का स्पष्ट अर्थ नहीं है, उनमें मन्त्र-शक्ति ही प्रमुख है, अथवा पशु-चारण-युगीन संस्कृति के गीत सुरक्षित हैं, उनके पास वेदों को अपौरुषेय कहने, सत्य-ज्ञान के मूल स्रोत मानने और भारतीय ज्ञान और अध्यात्म के प्रामाण्य स्वीकार करने के लिए कोई आधार नहीं है। उनके अनुसार सायण के द्वारा लगाये जाने वाले वेद-मन्त्रों के भाष्य अथवा पश्चिमी पद्धतियों से की जाने वाली इन मन्त्रों की व्याख्या के अनुसार जो अर्थ निकाला गया है, उसमें विरोधाभास, असंगतियाँ और क्लिष्ट कल्पनाएँ तो हैं ही, पर यदि उसको मान कर चला जाय, तो वेदों को उच्चतम मानवीय ज्ञान और मूल्यों के स्रोत मानने की बात तो दूर रही, कोई और विवेकशील व्यक्ति उसकी ओर ध्यान देने की जरूरत भी नहीं समझेगा। साथ ही इस प्रकार के अर्थों से यह भी प्रमाणित होगा कि वेदों में मानवीय समाज के असंस्कृत अथवा अर्द्धसंस्कृत आदिम स्तर की अभिव्यक्ति है। पश्चिमी संस्कृति और उसके समर्थन में विकसित पश्चिमी चिन्तन के लिए यह व्याख्या अनुकूल हो सकती है, पर जिस भारतीय परम्परा ने सदा अपनी संस्कृति और ज्ञान का मूल-स्रोत वेदों को माना है, और जो वेदों के प्रामाण्य पर सर्वदा अत्यधिक बल देते हैं, वे इसका क्या समाधान दे सकेंगे?

शेष भाग अगले अंक में.....

अग्नि और जल संसार के सब व्यवहारों के कारण हैं, इस से गृहस्थजन विशेष कर अग्नि और जल के गुणों को जानें और गृहस्थ के सब काम सत्य व्यवहार से करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२४

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में पिछले लगभग तीन वर्ष से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। ऋषि उद्यान में रह रहे डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

१. बैंक का नाम–**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या–**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम–**आई.डी.बी.आई**, पावर हाऊस के सामने,
जयपुर रोड़, अजमेर।
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या–**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091
email : psabhaa@gmail.com

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

आस्था भजन (चैनल) पर आर्य विद्वानों के प्रवचन

स्वामी रामदेव जी जन–जन के कल्याण को ध्यान में रखते हुए वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार के लिए 'आस्था–भजन' चैनल पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे तक दो घण्टे के बीच वैदिक विद्वानों के प्रवचनों को प्रसारित करवा रहे हैं।

इस कार्य में परोपकारिणी सभा द्वारा भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा है। परोपकारिणी सभा द्वारा प्रवचनों की आपूर्ति के लिए ऋषि उद्यान में रिकॉर्डिंग–यूनिट चल रही है और लगातार नित नये प्रवचनों की रिकॉर्डिंग की जा रही है। परोपकारिणी सभा ये प्रवचन आस्था–भजन (चैनल) को प्रदान कर रही है।

इन दिनों 'आस्था–भजन' (चैनल) पर प्रतिदिन सायं ७ से ७.२० बजे तक **आचार्य धर्मवीर** के वेद–प्रवचन, ७.३० से ७.५० तक **स्वामी विष्वङ्** के योगदर्शन प्रवचन, ८.३० से ८.५० तक **आचार्य सत्यजित्** के प्रवचन प्रसारित हो रहे हैं। इसी प्रकार आगे भी 'आस्था–भजन' पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे के बीच अन्य विद्वानों के व अन्य विषयों पर प्रवचन प्रसारित होते रहेंगे।

धर्मप्रेमी जन इन प्रवचनों का अधिकाधिक लाभ उठाएँ और अन्यों को भी अधिकाधिक सूचित करें।

'आस्था–भजन' (चैनल) डिश–टी.वी. और डी.टी.एच. पर उपलब्ध है, किन्तु टाटा–स्काई, वीडियोकोन, बिग–टी.वी. आदि पर नहीं आ रहा है। जिनके पास ये नहीं आ रहा है, वे अपने प्रसारक (सर्विस प्रोवाइडर) को बार–बार कह कर प्रेरित करते रहें, जिससे कि ये भी आस्था भजन को प्रसारित करने लगें। ऐसा करके वैदिक–धर्म के प्रचार–प्रसार में आप भी सहयोग प्रदान कर सकते हैं। जो केबल से देखते हैं, वे भी अपने केबल ऑपरेटर को कह कर आस्था भजन आरम्भ करवा सकते हैं।

सृष्टि उत्पत्ति क्यों और कैसे ?
मानव का प्रादुर्भाव कहाँ?

- आचार्य पं. उदयवीर जी शास्त्री

पिछले अंक का शेष भाग.....

उत्तर- प्रयोजन कामनामूलक होता है। ब्रह्म को ब्रह्मज्ञानियों ने पूर्णकाम व आप्तकाम बताया है, इसलिये सृष्टि रचना में ईश्वर का कामना मूलक कोई निजी प्रयोजन नहीं रहता। यह एक व्यवस्था है और ईश्वरीय व्यवस्था है, वह स्वयं अपनी व्यवस्था से बाहर नहीं जाता, उसके नियम सत्य हैं और पूर्ण हैं। उनके अनुसार ईश्वर सृष्टि रचना करता है- जीवात्माओं के भोग और अपवर्ग की सिद्धि के लिये। उसका यह कार्य उसकी एक स्वाभाविक विशेषता है, इसमें कभी कोई अन्तर या विपर्यास आने की संभावना नहीं की जा सकती। सृष्टि रचना के द्वारा ही परमात्मा का बोध होता है और इस मार्ग से जीवात्मा मोक्ष को प्राप्त करता है। जब यह प्राप्त नहीं होता, तब कर्मों को करता और उनके अनुसार सुख-दु:ख आदि फलों को भोगा करता है, सृष्टि-रचना का यही प्रयोजन है।

निराकार से साकार सृष्टि कैसे?

प्रश्न- ईश्वर को निराकार माना जाता है, वह निराकार होता हुआ सृष्टि की रचना कैसे करता है? लोक में देखा जाता है कि कोई भी कर्त्ता देहादि साकार सहयोगी के बिना किसी प्रकार की रचना करने में असमर्थ रहता है, तब निराकार ईश्वर इस अनन्त विश्व की रचना करने में कैसे समर्थ होता है?

उत्तर - अनन्त विश्व की रचना करने वाला निराकार ही समर्थ हो सकता है। जहाँ ईश्वर को निराकार माना गया है, वहाँ उसे सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान् भी कहा गया है। जैसा कि पहले कहा जाचुका है, 'सर्वशक्तिमान्' का यही तात्पर्य है कि वह जगद्रचना में अन्य किसी सहायक की अपेक्षा नहीं रखता, उसमें अनन्त शक्ति व पराक्रम है, उसका चैतन्य रूप सामर्थ्य असीम है, वह उसी सामर्थ्य द्वारा मूल उपादान जड़ प्रकृति को प्रेरित करता है, उसकी अनन्त सामर्थ्य युक्त व्यवस्था सूक्ष्मातिसूक्ष्म तत्त्वों में सर्वत्र व्याप्त है। वह कण-कण में अपना कार्य किया करती है। जीवात्मा अल्पज्ञ, अल्पशक्ति एवं एकदेशी है। उसे अपने किसी कार्य को संपन्न करने के लिये अन्तरंग साधन करण (बुद्धि मन आदि) तथा बाह्य साधन देह एवं देहावयवों की अपेक्षा रहती है, इसलिये लोक में देखी गई स्थूल व्यवस्था के अनुसार ऐश्वरी सृष्टि के विषय में ऊहा करना उपयुक्त न होगा।

यदि गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाय तो जीवात्मा द्वारा की जाने वाली प्रेरणाओं में उस स्थिति को पकड़ा जा सकता है, जहाँ किसी साकार सहयोगी की अपेक्षा नहीं जानी जाती । विचार कीजिये, आप कुर्सी पर बैठे हैं, मेज आपके सामने है, मेज पर आप का हाथ निश्चेष्ट रक्खा हुआ है, उससे कुछ दूर मेज के कोने पर कलम रक्खा है, आप उसे उठाकर कुछ लिखना चाहते हैं। आपकी इस इच्छा के साथ ही हाथ में हरकत होती है, वह ऊपर उठता और अँगुलियों में कलम पकड़ कर फिर पहली जगह आ टिकता है। अब विचारना यह है कि हाथ में उठने के लिये जो क्रिया हुई है, वह एक प्रेरणा का फल है, देह के अन्दर बैठा जो आपका चेतन आत्मा है, उसी से यह प्रेरणा प्राप्त होती है। प्रेरणा देने की सीमा में चैतन्य के अतिरिक्त किसी अन्य साकार सहयोगी का समावेश नहीं है। यहाँ केवल चेतन आत्मा प्रेरणा दे रहा है, जो निराकार है। उसके अन्य साधन बुद्धि, मन आदि प्रेर्यमाण सीमा में आते हैं, प्रेरक सीमा में नहीं। इससे यह परिणाम निकलता है कि चैतन्य एक ऐसा तत्त्व है, जो प्रेरणा का अन्य आधार व स्रोत है, जिसमें किसी अन्य साकार सहयोगी की अपेक्षा नहीं रहती। जीव-चेतन की शक्ति जैसे अति सीमित है, ऐसे ब्रह्म-चेतन की शक्ति असीमित है, जैसे जीव केवल देह में प्रेरणा प्रदान करता है, ऐसे परमेश्वर अनन्त सामर्थ्ययुक्त होने से अनन्त विश्व को प्रेरित करता है। सृष्टि रचना के विचार में यदि साकार सहयोगी की कल्पना की जाय तो

वस्तुतः यह रचना ही असंभव हो जायेगी, क्योंकि वह सहयोगी भी बिना रचना के असंभव होगा। फलतः अनन्त विश्व की रचना के लिये निरपेक्ष निराकार चैतन्य ही समर्थ हो सकता है, यह निश्चित है।

बिना कारण क्यों नहीं?

प्रश्न– ईश्वर जब सर्वशक्तिमान् है, तो वह बिना कारण के ही जगत् को क्यों नहीं बना देता?

उत्तर – यह संभव नहीं। बिना कारण के कोई कार्य नहीं होता, कारण न होना 'अभाव' का स्वरूप है, जो अभाव है, वह कभी भावरूप में परिणत नहीं हो सकता और न भावरूप पदार्थ का कभी सर्वथा अभाव होता है। बिना कारण अथवा अभाव से जगत् की उत्पत्ति कहना बन्ध्यापुत्र के विवाह के समान मिथ्या है।

प्रश्न– जब कारण के बिना कुछ नहीं हो सकता, तो कारण का भी कोई कारण मानना होगा, और उसका भी कोई अन्य कारण, इस प्रकार तुम्हारे इस कथन में अनवस्था दोष आता है कि कारण के बिना कुछ नहीं हो सकता।

उत्तर– हमने यह नहीं कहा कि कारण के बिना कुछ नहीं हो सकता। ऐसे भी पदार्थ हैं, जो किसी के कारण हैं, पर वे स्वयं किसी के कारण हैं, तो वे स्वयं किसी के कार्य भी हैं। ऐसे पदार्थों को 'कारण-कार्य' अथवा 'प्रकृति-विकृति' कहा जाता है। जैसे घड़ा मिट्टी से बनता है, मिट्टी पृथ्वी रूप है, पृथ्वी घड़े मकान आदि का कारण होते हुए भी अपने कारणों का कार्य है, अर्थात् जिन कारणों से पृथ्वी की रचना होती है, उनका कार्य है। परन्तु जो सब कार्य जगत् का मूल कारण है, उसका और कोई कारण नहीं होता, जगत् का मूल उपादान कारण अनादि पदार्थ है, वह किसी से उत्पन्न या परिणत नहीं होता, यदि ऐसा होता तो वह मूल कारण नहीं हो सकता था। इस प्रकार जैसे जगत् का कर्त्ता निमित्त कारण ईश्वर अनादि है, वैसे ही जगत् का मूल उपादान कारण प्रकृति भी अनादि है। उसका अन्य कोई कारण संभव नहीं, क्योंकि वह कार्य नहीं, केवल कारण है, अतएव अनवस्था दोष की यहाँ संभावना नहीं हो सकती।

अन्य वादों का विवेचन

प्रश्न– आप प्रकृति उपादान से जगत् की सृष्टि कहते हैं, पर अन्य अनेक आचार्यों के सृष्टि की उत्पत्ति के विषय में विविध विचार हैं, क्या उनमें कोई सत्यता नहीं है? उन विचारों को निम्नलिखित वादों के रूप में उपस्थित किया जा सकता है-शून्यवाद, अभाववाद, आकस्मिकवाद, सर्वानित्यत्ववाद, भूतनित्यत्ववाद, पृथक्त्ववाद, इतरेतराभाववाद, स्वभाववाद, जगदनादिवाद, जीवेश्वरवाद आदि। क्या इनके अनुसार सृष्टि की यथार्थ व्याख्या संभव नहीं?

उत्तर – इन वादों के आधार पर सृष्टि की सत्य एवं पूर्ण व्याख्या होना सम्भव नहीं, ये सब एकदेशी, अवैदिक वाद हैं, जो किसी एक अंश पर धुँधला-सा प्रकाश डालते हैं, कहीं वह भी नहीं, प्रत्युत प्रकाश की जगह अन्धकार का ही विस्तार करते हैं। जगत् की यथार्थ विद्यमानता पहले दोनों वादों को ठुकरा देती है। किसी वस्तु का होना कहना अथवा उत्पन्न होना बताना और उसे अकस्मात् कहना परस्पर विरोधी हैं। जो वस्तु उत्पन्न होती है, वह निश्चित ही अपने कारणों से होगी, यह अलग बात है कि हम उन कारणों को जान सकें या न जान सकें। सब वस्तु अनित्य है, अथवा भूत नित्य हैं, इसलिए सब वस्तु नित्य हैं, ये कथन अपने ही में मिथ्या है। किसी वस्तु का नित्य या अनित्य होना विशिष्ट निमित्तों पर आधारित है, उत्पन्न होने वाली वस्तु अनित्य तथा उत्पादन-विनाश से रहित वस्तु नित्य कही जाती है, यह एक व्यवस्था है। प्रत्येक वस्तु न नित्य हो सकती है, न अनित्य।

पृथक्त्ववाद आधुनिक रसायनशास्त्र से पर्याप्त सीमा तक मेल रखता है। रसायनशास्त्र के अनुसार आज तक ऐसे एक सौ दो पदार्थों का पता जग चुका है, जो मूल रूप में एक दूसरे से पृथक् हैं, एक दूसरे में किसी का कोई अंश नहीं है, भविष्य में और भी ऐसे अनेक पदार्थों का पता लग जाने की संभावना है। सोना, चाँदी, लोहा, तांबा, पारा, गन्धक, जस्ता, सीसा, कैल्शियम, आक्सीजन, हाइड्रोजन, कॉर्बन, नाईट्रोजन, सिलिकन्, फास्फोरस, ऐल्युमिनिअम, आर्सनिक, प्लैटिनम् आदि सब ऐसे पदार्थ हैं, जो सर्वथा एक दूसरे से पृथक् हैं। किसी में किसी का

कोई अंश नहीं है, पर भौतिकी विज्ञान ने ही इस तथ्य को स्पष्ट कर दिया है कि ये सब किन्हीं मूल तत्त्वों के सम्मिश्रण से बने हैं। वे मूल तत्त्व प्रोटॉन, इलैक्ट्रॉन और न्यूट्रॉन् हैं, भारतीय दार्शनिक विचार के अनुसार इन्हें यथाक्रम सत्व, रजस्, तमस् के वर्ग में समझा जा सकता है। वैसे भी उक्त पदार्थों में से प्रत्येक में आकाश, काल, सामान्य (जाति) एवं नियन्ता शक्ति परमात्मा आदि का विद्यमान रहना अनिवार्य है, इसलिये स्वरूप से इनके पृथक् रहते भी इनमें अन्य पदार्थों का अस्तित्व रहता ही है।

पदार्थों के इतरेतराभाव से सब पदार्थों का अभाव बताना सर्वथा प्रत्यक्ष विरुद्ध है। गाय घोड़ा नहीं, घोड़ा गाय नहीं, इसलिये न गाय है न घोड़ा, ऐसा कहना नितान्त विचार शून्य है। यद्यपि गाय घोड़ा नहीं है, पर गाय गाय है, घोड़ा घोड़ा है, उनके अपने अस्तित्व को कैसे झुठलाया जा सकता है?

'स्वभाव' से जगत् की उत्पत्ति कहना, किस अर्थ को प्रकट करता है, यह विचारणीय है। स्वभाव में 'स्व' पद का अर्थ क्या है? यदि पद मूल कारण को कहता है, तो इस पद मात्र के अलग कहने से कोई अन्तर नहीं आता, अपने मूल कारण से जगत् उत्पन्न होता है, यही उसका तात्पर्य हुआ। इसी प्रकार वर्तमान रूप में जगत् को अनादि कहना प्रमाण विरुद्ध है। जागतिक वस्तुओं में परिणाम व परिवर्तन अथवा उत्पादन-विनाश बराबर देखा जाता है, जो इसके बने हुए होने को सिद्ध करता है, इसी रूप में जगत् को अनादि कहना अयुक्त है। पृथिव्यादि पदार्थ अवयव संयोग से बने परीक्षा द्वारा प्रत्यक्ष देखे जाते हैं। यह कहना भी सर्वथा अयुक्त है कि जगत् का कर्त्ता ईश्वर कोई नहीं, जीवात्मा ही सिद्ध अवस्था को प्राप्त होकर जगद्रचना कर सकते हैं। जीवात्मा को सिद्ध अवस्था तक पहुँचने के लिये भी संसार की आवश्यकता है, यह संसार किसने बनाया? किसी जीवात्मा का अनादि सिद्ध होना सम्भव नहीं। यदि कोई चेतन आत्मतत्त्व सृष्टि रचना का सामर्थ्य रखने वाला अनादि सिद्ध माना जाता है, तो उसे ही परमात्मा कहा जा सकता है।

सृष्टि का क्रम प्रवाह से अनादि है, उत्पत्ति स्थिति और प्रलय जगत् के अनादि काल से चले आते हैं, अनन्त काल तक इसी प्रकार चलते रहेंगे, यह ऐश्वरी व्यवस्था है। कल्प-कल्पान्तर में परमेश्वर ऐसी ही सृष्टि को बनाता, धारण करता एवं प्रलय करता रहता है। ईश्वर के कार्य में कभी भूल-चूक या विपर्यास नहीं होता।

दर्शनों में विरोध

प्रश्न-सृष्टि विषय में क्या वेदादि शास्त्रों का एवं भारतीय दर्शनों का परस्पर विरोध नहीं है? कहीं आत्मा से, कहीं परमाणु से, कहीं प्रकृति से, कहीं ब्रह्म और काल एवं कर्म से सृष्टि कही है। इनमें स्पष्ट विरोध प्रतीत होता है।

उत्तर- इनमें विरोध कोई नहीं, ये सब एक दूसरे के पूरक हैं। प्रत्येक कार्य अनेक कारणों से बनता है। यह कहा जा चुका है, कार्य मात्र के तीन कारण हुआ करते हैं, निमित्त, उपादान और साधारण। न्यायादि दर्शनों में जगत् के विभिन्न कारणों का वर्णन है और उसके लिये अन्य उपयोगी विधियों का। प्रत्येक वस्तु की सिद्धि के किसी भी स्वर पर हमें प्रमाणों का आश्रय लेना पड़ता है, इस स्थिति का कोई दर्शन विरोध नहीं करता। तत्त्व विषयक जिज्ञासा होने पर प्रारम्भ में शिक्षा का उपक्रम वहीं से होता है, जिनका प्रतिपादन वैशेषिक दर्शन करता है। तत्त्वों के स्थूल-सूक्ष्म साधारण स्वरूप और उनके गुण-धर्मों की जानकारी पर ही आगे तत्त्वों की अति सूक्ष्म अवस्थाओं को जानने-समझने की ओर प्रवृत्ति एवं क्षमता का होना सम्भव है। प्रमाण और बाह्य प्रमेय का विषय न्याय-वैशेषिक दर्शनों में प्रतिपादित किया गया है। तत्त्वों की उन अवस्थाओं और चेतन-अचेतन रूप में उनके विश्लेषण को सांख्य प्रस्तुत करता है। चेतन-अचेतन के भेद को साक्षात्कार करने की प्रक्रियाओं का वर्णन योग में है। इन प्रक्रियाओं के मुख्य साधनभूत मन की जिन विविध अवस्थाओं के विश्लेषण का योग में वर्णन है, वह मनोविज्ञान की विभिन्न दिशाओं का केन्द्रभूत आधार है। समाज के कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का वर्णन मीमांसा एवं समस्त विश्व के संचालक व नियन्ता चेतन तत्त्व का वर्णन वेदान्त करता है। यह ज्ञान साधन कार्यक्रम भारतीय संस्कृति के अनुसार वर्णाश्रम धर्मों एवं कर्त्तव्यों के रूप में पूर्णतया व्यवस्थित है। इन

उद्देश्यों के रूप में कहीं किसी का किसी के साथ विरोध का उद्भावन अकल्पनीय है। दर्शनों में जिन तत्त्वों का निरूपण किया है, सृष्टि रचना में एक दूसरे के पूरक होकर वे तत्त्व पहले कहे तीन कारणों में अन्तर्हित अथवा समाविष्ट हैं, इनमें विरोध का कहीं अवकाश नहीं।

प्राणी का प्रादुर्भाव कैसे?

प्रश्न- पृथिव्यादि लोक-लोकान्तर तथा पृथिवी पर औषधि वनस्पति आदि उत्पन्न हो जाने पर संचरणशील प्राणी का प्रादुर्भव कैसे होता है? चालू सर्गक्रम में ऐसे प्राणी का प्रजनन मिथुनमूलक देखा जाता है, यह स्थिति सर्वादिकाल में होनी संभव नहीं । यह एक उलझन भरी समस्या है कि सर्वप्रथम प्राणी का प्रादुर्भाव कैसे हुआ।

उत्तर-सर्वप्रथम प्राणी का प्रादुर्भाव बाह्य मिथुन मूलक नहीं होता। परमात्मा अपनी अचिन्त्यशक्ति एवं व्यवस्था के अनुसार स्त्री-पुरुषों के शरीर बनाकर उनमें जीवों का संयोग कर देता है। शरीर की रचना जिस प्रक्रिया के अनुसार चालू होती है, उसमें जीवात्मा का संचार प्रथमत: हो जाता है। प्राणी शरीर की रचना अत्यन्त जटिल है, शरीर-रचना की इस सुव्यवस्था को देखकर रचना करने वाले का अनुमान होता है। जो व्यवस्था जिस प्राणी वर्ग में निहित कर दी गई है, वह चालू संसार के मिथुन-मूलक प्रजनन में अब तक चली आ रही है और प्रलयपर्यन्त चलती रहेगी। इससे आदि शरीर की रचना बाह्य मैथुन रहित केवल परमात्मा की नित्य व्यवस्था के अनुसार होती है। यह अनुमान वर्तमान में देखी गई व्यवस्था के आधार पर किया जा सकता है।

प्रश्न- इतने कथन से आदि सर्ग में मानव शरीर रचना की प्रक्रिया का स्पष्टीकरण नहीं होता। इसका और स्पष्ट विवरण देना चाहिए।

उत्तर- आदि सर्ग में प्राणी देह की रचना ऐश्वरी सृष्टि में गिनी जाती है। सर्वप्रथम जो प्राणी हुए, विशेषत: मानव प्राणी, उनका पालन-पोषण करने वाला माता-पिता आदि कोई न था, इसलिये यह निश्चित सम्भावना होती है कि वे मानव किशोर अवस्था में प्रादुर्भूत हुए, कतिपय आधुनिक वैज्ञानिक भी ऐसा मानने लगे हैं। बोस्टन नगर के स्मिथसोनियन इन्स्टीट्यूट के जीव विज्ञान शास्त्र के अध्यक्ष डॉ. क्लॉर्क का कथन है- मानव जब प्रादुर्भूत हुआ, वह विचार करने, चलने फिरने और अपनी रक्षा करने के योग्य था- Man appeared able to think walk and defend him self.

समस्या यह है कि मानव ऐसा विकसित देह सर्वप्रथम प्रादुर्भूत कैसे हुआ? उसकी रचना किस प्रकार हुई होगी? सचमुच यह समस्या अत्यन्त गम्भीर है। ऐसी स्थिति में ऐसे शरीरों का प्रकट हो जाना अनायास बुद्धिगम्य नहीं है। इसे समझने के लिये हमें चालू सर्गकाल के प्रजनन की स्थिति पर ध्यान देना चाहिये, सम्भव है वहाँ की कोई पकड़ इस समस्या को सुलझाने में सहयोग दे सके। साधारण रूप से प्रजनन की विधा चार वर्गों में विभक्त है- जरायुज, अण्डज, उद्भिज्ज और स्वेदज अथवा ऊष्मज। अन्तिम वर्ग अतिसूक्ष्म, अदृश्य कृमि-कीटों से लगाकर दृश्य क्षुद्र जन्तुओं तक का है। इस वर्ग के प्राणी का देह नियत ऊष्मा पाकर अपने कारणों से उद्भूत हो जाता है। उद्भिज्ज वर्ग वनस्पति का है। चालू सर्ग काल में देखा जाता है कि बीज से वृक्ष होता है, पर सबसे पहले वृक्ष का बीज कैसे हुआ, यह विचारणीय है। निश्चित है कि वह बीज वृक्ष पर नहीं लगा, तब यही अनुमान किया जा सकता है कि उसकी रचना प्रकृति गर्भ में होती रही होगी। बीज में प्रजनन शक्ति-अंश एक कोष (खोल) में सुरक्षित रहता है, यह स्पष्ट है। वृक्ष पर बीज के निर्माण की प्रक्रिया भी नियन्ता की व्यवस्था के अनुसार प्रकृति का एक चमत्कार है। वंश बीज-निर्माण की प्रक्रिया क्या है, प्रजनन-अंश किस प्रकार कोष में सुरक्षित हो जाते हैं, जड़ से बीज तक कैसे उसका निर्माण होता आता है, इसे आज तक किसने जाना है? इसी प्रकार अण्डज वर्ग में बीज एक अति सुरक्षित कोष में आहित रहता है, इस वर्ग में कीड़ी तथा उससे भी अन्य कतिपय सूक्ष्म जन्तुओं से लेकर अनेक सरीसृप जाति के प्राणी स्थलचर तथा जलचर एवं नभचर पक्षी जाति का समावेश है। विभिन्न जातियों के देहों के अनुसार कोश की रचना छोटी-बड़ी देखी जाती है। इस वर्ग का भ्रूण एक विशेष प्रकार के खोल से सुरक्षित रहता

है, मातृ-गर्भ में उपयुक्त पोषण प्राप्त कर गर्भ से बाहर भी नियत काल तक कोश युक्त रहता हुआ पोषण प्राप्त करता है। भ्रूण का यथायथ परिपाक होने पर खोल फटता है और बच्चा निकल आता है, यह प्रकृति का एक चमत्कार है। इस वर्ग में उत्पत्तिकाल की दृष्टि से कुछ अधिक बड़े देहवाले प्राणियों का सामावेश है तथा यह एक विचारणीय बात है कि भ्रूण का गर्भ से बाहर भी परिपोषण होता है।

अण्डज वर्ग के आगे बड़ी देह वाला प्राणी-वर्ग जरायुज है, जिसमें मानव एवं समस्त पशु-मृग आदि का समावेश है। कोश में भ्रूण के परिपोषण की प्राकृत व्यवस्था इस वर्ग में भी समान है। मातृगर्भ भ्रूण पूर्णाङ्ग होने तक जरायु में परिवेष्टित रहता है। स्निग्ध सुदृढ़ चमड़े जैसे पदार्थ की थैली का नाम जरायु है, पूर्णाङ्ग होने पर बालक इसको भेद कर ही मातृगर्भ से बाहर आता है। इस प्रकार भ्रूण की सुरक्षा, उपयुक्त पुष्टि व वृद्धि तक के लिए उसका विशिष्ट कोश में परिवेष्टित होना सर्वत्र प्राणी-वर्ग में समान है। यह एक ऐसी नियत व्यवस्था है, जो प्राणी के प्रादुर्भाव की आद्य-स्थिति पर पर्याप्त प्रकाश डालती है। चालू सर्ग काल अथवा मैथुनी सृष्टि में नर-मादा का संयोग प्राणी के साजात्य प्रजनन की जिस स्थिति को प्रस्तुत करता है, वह स्थिति अमैथुनी सृष्टि में प्राकृत नियमों व व्यवस्थाओं के अनुसार प्रकृति गर्भ में प्रस्तुत हो जाती है। इस व्यवस्था से और अण्डजवर्ग के सामान मातृगर्भ से बाहर भ्रूण की परिपोषण प्रक्रिया से यह अनुमान होता है कि सर्व-प्रथम आदि काल में मानव आदि बड़े की रचना प्रकृति पोषित सुरक्षित उपयुक्त कोशों द्वारा हुई होगी। चालू सर्गकाल में देहों के अनुसार कोषों के आकार में विभिन्नता देखी जाती है। यह सम्भव है, आदि काल में प्रकृतिनिर्मित उपयुक्त कोशों में सुरक्षित एवं परिपोषित मानव आदि के किशोरावस्थापन्न सजीव देह यथावसर प्रादुर्भूत हुए हों। आदि सर्ग में विविध प्राणियों का अनेक संख्या में प्रादुर्भाव हो जाता है, यह मानने में कोई बाधा नहीं है। यह सब जीवों के कर्मानुसार ऐश्वरी व्यवस्था के सहयोग से हुआ करता है।

आदि मानव का मूल स्थान

प्रश्न- सर्वप्रथम मानव का प्रादुर्भाव पृथ्वी के किस प्रदेश पर हुआ?

उत्तर- भारतीय साहित्य के आधार पर अनेक दिशाओं से यह स्पष्ट होता है कि मानव का सर्वप्रथम प्रादुर्भाव '**त्रिविष्टप** ' नामक प्रदेश में हुआ, जो वर्तमान तिब्बत के कैलाश, मानसरोवर प्रदेश तथा उससे सुदूर पश्चिम और कुछ दक्षिण-पश्चिम की ओर फैला हुआ था। कुछ समय पश्चात् गंगा, सरस्वती आदि नदी घाटियों के द्वारा आर्यों ने भारत प्रदेश में आकर निवास किया और इसका आर्यावर्त्त नाम रक्खा, सर्वप्रथम यहाँ आर्यों का निवास हुआ। उनसे पहले यहाँ अन्य किसी मानव का निवास नहीं था। आर्यों का मूल स्थान और यह भूभाग एक ही देश था। आर्य कहीं बाहर से यहाँ कभी नहीं आये। इक्ष्वाकु से लेकर कौरव-पाण्डव पर्यन्त पृथ्वी के इन समस्त भागों पर आर्यों का अखण्ड राज्य और वेदों का थोड़ा-थोड़ा सर्वत्र प्रचार रहा। अनन्तर आर्यों का आलस्य, प्रमाद और परस्पर का विरोध समस्त ऐश्वर्य एवं विभूतियों को ले बैठा। पृथिव्यादि लोकों की लगभग एक अरब सत्तानवें करोड़ वर्ष की आयु में अब तक आर्यों का अधिक काल अभ्युदय का बीता है। वेद धर्म पर प्रज्ञा पूर्वक आचरण करने से अब भी उत्कृष्ट अभ्युदय की सम्भावना की जा सकती है।

इस प्रकार सर्वशक्तिमान् परमेश्वर ने अतिसूक्ष्म प्रकृतिरूप उपादान कारण से जगत् को बनाया, जो असंख्य पृथिव्यादि लोक-लोकान्तरों के रूप में दृष्टिगोचर हो रहा है। ये समस्त लोक अपनी गति एवं परस्पर के आकर्षण से ऐश्वरी व्यवस्था के अनुसार अनन्त आकाश में अवस्थित हैं। जैसे परमेश्वर इन सब का उत्पादक है, वैसे ही इनका धारक एवं संहारक भी रहता है। हमारी इस पृथ्वी के समान अन्य लोक-लोकान्तरों में भी प्राणी का होना संभव है। जीवात्माओं के कर्मानुष्ठान और सुख-दुःखादि फलों को भोगने तथा आत्म-ज्ञान होने पर अपवर्ग की प्राप्ति जगद्रचना का प्रयोजन है। असंख्य लोकान्तरों की रचना का निष्प्रयोजन होना असम्भव है, अतः लोकान्तरों में भी प्राणी का होना सम्भव है। वेद का ज्ञान सब के लिए समान है। समस्त विश्व पर परमेश्वर का नियन्त्रण रहता है। उसी व्यवस्था के अनुसार सब तत्त्व अपना कार्य किया करते हैं।

अथर्व - ६.२६. -सूक्त-विष्णु देवता के मन्त्रों का वैज्ञानिक विवेचन

- आर.बी.एल. गुप्ता एवं डॉ. पुष्पा गुप्ता

श्री आर.बी.एल. गुप्ता बैंक में अधिकारी रहे हैं। आपकी धर्मपत्नी डॉ. पुष्पा गुप्ता अजमेर के राजकीय महाविद्यालय संस्कृत विभाग की अध्यक्ष रहीं हैं। उन्हीं की प्रेरणा और सहयोग से आपकी वैदिक साहित्य में रुचि हुई, आपने पूरा समय और परिश्रम वैदिक साहित्य के अध्ययन में लगा दिया, परिणामस्वरूप आज वैदिक साहित्य के सम्बन्ध में आप अधिकारपूर्वक अपने विचार रखते हैं।

आपकी इच्छा रहती है कि वैज्ञानिकों और विज्ञान में रुचि रखने वालों से इस विषय में वार्तालाप हो। इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर इस वर्ष वेदगोष्ठी में एक सत्र वेद और विज्ञान के सम्बन्ध में रखा है। इस सत्र में विज्ञान में रुचि रखने वालों के साथ गुप्त जी अपने विचारों को बाँटेंगे। आशा है परोपकारी के पाठकों के लिए यह प्रयास प्रेरणादायी होगा।

-सम्पादक

इस सूक्त के प्रथम मन्त्र में विष्णु के वीर्य कर्मों को बताया गया है। विष्णु गुरुत्वाकर्षण शक्ति के अधिष्ठाता देव हैं। वेद के जिन मन्त्रों में अथवा ब्राह्मण ग्रन्थों में जहाँ पर भी विट्,विशः, विष्णु शब्द आते हैं-वहाँ पर गुरुत्वाकर्षण शक्ति से सम्बन्धित व्याख्यान हैं- ऐसा निश्चित रूप से समझ लेना चाहिये। विष्णु का प्रथम वीर्य कर्म है-पार्थिव रजों को नापना अर्थात् पिण्ड की मात्रा के अनुसार गुरुत्वाकर्षण शक्ति का होना। दूसरा वीर्य कर्म है- उत्तर सधस्थ (उत्तम स्थान पर स्थित पिण्ड) को त्रेधा विचक्रमण (तीन प्रकार से धारित शक्ति से पिण्ड को चक्रित करना) तथा उरुगमन (एक बिन्दु से विस्तृत होते हुए जाना) प्रक्रियाओं से स्कंभित करना।

पार्थिव रज का तात्पर्य है- गुरुत्वाकर्षण (g) ऋ. १.३५.४ में कृष्णा रजांसि पद, ऋ. १.३५.९ में कृष्णेन रजसा पद, ऋ. १.१२.५ में अन्तरिक्षे रजसो-विमानः इन मन्त्रों में-कृष्ण रज-पार्थिव रज-शब्दों में वैज्ञानिक अर्थ है- g (गुरुत्वाकर्षण)। कोई भी भौतिक कण चाहे कितना भी हल्का क्यों न हो, जब तक एक निश्चित आकृति (volume) एवं निश्चित मात्रा (m) का बनकर एक निश्चित कण का रूप ले लेता है, तब उसमें एक निश्चित घनत्व एवं निश्चित गुरुत्वाकर्षण (g) आ जाता हैं। एक निश्चित आकृति के कण को वेद मन्त्रों में मृग कहा गया हैं। ऋ. १.१५४.२ (अथर्व ७.२६.२) में-मृगः न भीमः कुचरः गिरिष्ठा पद में गिरि में स्थित कुत्सित गति वाला भयानक मृग- यह अर्थ एक निश्चित मात्रा में आये कण जिसमें गुरुत्व शक्ति आ गई है- के लिये कहा गया हैं।

त्रेधा विचक्रमण क्या है? हमारी पृथ्वी एवं सूर्य का उदाहरण-

पृथ्वी अपनी धुरी (Axis) पर एक अहोरात्रि में पूरी घूम जाती है, तथा साथ ही लगभग २५००० कि.मी. दूरी सूर्य की परिक्रमा करती हुई आगे बढ़ती है। यहाँ पृथ्वी में दो प्रकार की गति (चक्रमण)है- (१.) अपनी धुरी पर घूमना (२.) सूर्य के परिक्रमा पथ पर घूमते हुये ही आगे बढ़ना।

सूर्य पृथ्वी से कई लाख गुणा आकार में अधिक है, तथा १५ करोड़ किलोमीटर दूरी पर है, फिर भी सूर्य की गुरुत्वाकर्षण शक्ति घूमती हुई पृथ्वी को सतत अपनी ओर आकर्षित करती है। सूर्य की इस शक्ति को निःशेष करने के लिये पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है तथा परिक्रमा पथ पर आगे बढ़ती है। इस प्रकार पृथ्वी का जो विचक्रमण हो रहा है, उसका कारण यह तीन प्रकार से पृथ्वी पर धारित शक्तियों के कारण हैं। यदि ऐसा न हो तो पृथ्वी सूर्य में गिरकर सूर्य में समा जायेगी। ऐसी स्थिति प्रलय अवस्था में अवश्य आयेगी।

उरुगमन- जंघाओं को फैलाकर जब हम खड़े होते हैं- जब जंघाओं की स्थिति इस प्रकार की होती है, इसे विज्ञान की भाषा में उरुगमन कहते हैं (Divertion of Rays)। गुरुत्व शक्ति की किरणें इसी नियम का पालन करती हैं।

विष्णु का ३ पदों में विचक्रमण क्या है?

ऋ. १.१६४.२ में त्रिनाभि चक्रं अजरं अनर्वं पद आया है। वेद मन्त्रों में आया त्रिनाभि चक्र- अण्डाकार आकृति को बताता है- जिसमें तीन केन्द्र बिन्दु (नाभियाँ) होती हैं। पृथ्वी का सूर्य की परिक्रमा का मार्ग भी अण्डाकार है। इस अण्डाकार मार्ग का मूल सिद्धान्त है- केन्द्र में बड़ा पिण्ड जैसे सूर्य उसके दोनों तरफ दो और केन्द्र बिन्दु A व B होते हैं। पृथ्वी (E) इस प्रकार घूमती है कि पृथ्वी का इन दोनों बिन्दुओं A व B से दूरी का योग हमेशा समान अर्थात् दूरी AE + BE का योग हमेशा समान रहेगा तथा इस प्रकार पृथ्वी का परिभ्रमण मार्ग अण्डाकार बन जाता है।

यही उदाहरण सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करने वाले अन्य ग्रह-बुध, शुक्र, मंगल, ब्रहस्पति, शनि आदि में भी दिया जा सकता है। यही नहीं, अति सूक्ष्म परमाणु में भी प्रोटोन एवं इलेक्ट्रोन भी इसी त्रिनाभि चक्रं-त्रेधा विक्रमण आदि नियमों का पालन करते हैं।

इन्द्रस्य युज्यसखाः - इस सूक्त के मन्त्र संख्या ६ में यह पद आया है। इन्द्र दिव्य रजः (emt)का अधिष्ठाता देव है, तथा विष्णु पार्थिव रजः (g) का । परमाणु के अन्दर प्रोटोन का उदाहरण- प्रोटोन के दो भाग हैं- (१.) पार्थिव भाग (matter) तथा (२.) दिव्य भाग (e.m.t.)। इसी प्रकार इलेक्ट्रॉन भी है, पर उसमें विद्युत शक्ति-है जबकि प्रोटोन में + है। प्रोटोन तथा इलेक्ट्रोन के मध्य भी दो प्रकार की आकर्षण शक्ति (१) विद्युत् शक्ति का आकर्षण (इन्द्र की शक्ति) एवं (२) गुरुत्वाकर्षण शक्ति (विष्णु की शक्ति)। अतः मन्त्र ६ में कहा है कि विष्णु के कर्मों को देखो जहाँ वह व्रतों को स्पर्श करता है तथा इन्द्र का योजित सखा है। प्रोटोन तथा इलेक्ट्रोन दोनों परामाणु के अन्दर अपने-अपने व्रत्तों में घूमते हैं- एक-दूसरे के व्रत्त (orbit) को स्पर्श करते हुए।

मन्त्र ७ में सूर्यः विष्णु के परम् पद को सदा देखते हैं। यहाँ परम् पद से तात्पर्य है गुरुत्व शक्ति का केन्द्र बिन्दु (centre of gravity)

मन्त्र ४ में समूढं अस्य पांसुरे। पांसुरे शब्द (collective) अर्थ में है। छोटा पिण्ड हो या बड़ा, मात्रा अधिक या कम होने से पूरे पिण्ड की गुरुत्वाकर्षण शक्ति कम या अधिक हो जायेगी, परन्तु समूह रूप में पूरे पिण्ड की गुरुत्वाकर्षण शक्ति केन्द्र बिन्दु (पांसुरे पद) में गुप्त रूप से निहित हो जाती है।

संस्कृति की नींव के पत्थर

- मधुर गंज मुरादाबादी

गूँजता अब तक समय के वाद्य पर,
आस्था का इन्द्रधनुषी स्वर।
मृत्यु की नीरव परिधि में खो गये व्यक्तित्व सबके,
किन्तु उनके कर्म-सुमनों से महकती हैं दिशाएँ।
पाँच तत्वों से बनी यह देह मिलती फिर उन्हीं में,
शेष रह जातीं जगत में सद्गुणों की ही कथाएँ।।
प्रश्न अगली पीढ़ियों के कर रहीं हल,
देर ही सबके सफल उत्तर।
ये सुखों के साज सारे नष्ट हो जाते निमिष में,
काल तो जैसे कुटी वैसे महल को भी मिटाता।
आज इसको कल उसे मिटना सभी को एक दिन है,
नाश ही निर्माण की भी भूमिका नूतन रचाता।
धूल में मिलती महल की रूपरेखा,
महल बनते आज के खँडहर।
दुःख-सुख,जीवन-मरण के द्वन्द्व से ऊपर उठे जो,
कर्म रत रहते, मगर करते न फल की याचनाएँ।
वर्ण-भाषा-क्षेत्र के हर भेद से रहते परे जो,
विश्व उनकी सूक्तियों को मानता निर्मल ऋचाएँ।।
लाख बदलें युग मगर हिलते नहीं ये,
संस्कृति की नींव के पत्थर।

- गंजमुरादाबाद, उन्नाव, उ.प्र.

वैदिक पुस्तकालय के प्रकाशन

महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत

वेदभाष्य, वेदभाषाभाष्य, मूलवेद, वेदांगप्रकाश और वैदिक साहित्य

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
	वेद संहिताएँ– (केवल मन्त्र)	
१.	ऋग्वेद संहिता (मूल) मन्त्र–	रु.
	वर्णानुक्रमणिका सहित सजिल्द (बढ़िया)	६००.००
२.	"यजुर्वेद संहिता"(मूल) मन्त्र	
	वर्णानुक्रमणिका सहित सजिल्द (बढ़िया)	१८०.००
३.	यजुर्वेद संहिता (मूल) सजिल्द (साधारण)	१००.००
४.	सामवेद संहिता (मूल) मन्त्र	
	वर्णानुक्रमणिका सहित सजिल्द (बढ़िया)	१६०.००
५.	अथर्ववेद संहिता (मूल) मन्त्र–	
	वर्णानुक्रमणिका सहित सजिल्द (बढ़िया)	४००.००
६.	चतुर्वेद विषय सूची	४०.००
७.	सामवेद के मन्त्रों की वर्णानुक्रमणिका	२.००
८.	ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सजिल्द	१२०.००
९.	ऋग्वेद के प्रथम बाईस मन्त्रों का भाष्य	५.००
	वेद भाष्य–(संस्कृत एवं हिन्दी, दोनों में भाष्य)	
१०.	ऋग्वेदभाष्य पहला भाग (सजिल्द)	१५०.००
११.	ऋग्वेदभाष्य दूसरा भाग (सजिल्द)	२००.००
१२.	ऋग्वेदभाष्य तीसरा भाग (सजिल्द)	२००.००
१३.	ऋग्वेदभाष्य चौथा भाग (सजिल्द)	१५०.००
१४.	ऋग्वेदभाष्य पांचवां भाग (सजिल्द)	२५०.००
१५.	ऋग्वेदभाष्य छठा भाग (सजिल्द)	३००.००
१६.	ऋग्वेदभाष्य सातवाँ भाग (सजिल्द)	२००.००
१७.	ऋग्वेदभाष्य आठवाँ भाग (सजिल्द)	२००.००
१८.	ऋग्वेदभाष्य सप्तम मंडल	
	प्रथम भाग सजिल्द	७०.००
१९.	ऋग्वेदभाष्य सप्तम मंडल	
	द्वितीय भाग सजिल्द (पं. आर्यमुनि)	६०.००
२०.	ऋग्वेदभाष्य अष्टम मण्डल	
	पहला भाग सजिल्द	
२१.	ऋग्वेदभाष्य अष्टम मण्डल	
	दूसरा भाग सजिल्द	
२२.	ऋग्वेदभाष्य नवम मण्डल	
	प्रथम भाग सजिल्द (पं. आर्यमुनि)	१५०.००
२३.	ऋग्वेदभाष्य नवम मण्डल द्वितीय भाग सजिल्द	३००.००
२४.	ऋग्वेदभाष्य दसवां मण्डल प्रथम भाग	
	सजिल्द (स्वामी ब्रह्ममुनि)	२००.००
२५.	ऋग्वेदभाष्य दसवाँ मण्डल द्वितीय भाग	
	सजिल्द (स्वामी ब्रह्ममुनि)	९०.००
२६.	यजुर्वेदभाष्य पहला भाग (सजिल्द)	२००.००
२७.	यजुर्वेदभाष्य दूसरा भाग (सजिल्द)	३५०.००
२८.	यजुर्वेदभाष्य तीसरा भाग (सजिल्द)	२५०.००
२९.	यजुर्वेदभाष्य चौथा भाग (सजिल्द)	१५०.००
	वेद भाषाभाष्य – (केवल हिन्दी भाष्य)	
३०.	ऋग्वेदभाषाभाष्य का नमूना	५.००
३१.	ऋग्वेदभाषाभाष्य पहला भाग (सजिल्द)	२००.००
३२.	ऋग्वेदभाषाभाष्य दूसरा भाग (सजिल्द)	३५.००
३३.	ऋग्वेदभाषाभाष्य तीसरा भाग (सजिल्द)	३५.००
३४.	ऋग्वेदभाषाभाष्य चौथा भाग (सजिल्द)	२५.००
३५.	ऋग्वेदभाषाभाष्य पांचवां भाग (सजिल्द)	३०.००
३६.	ऋग्वेदभाषाभाष्य छठा भाग (सजिल्द)	३०.००
३७.	ऋग्वेदभाषाभाष्य सातवाँ भाग (सजिल्द)	५०.००
३८.	ऋग्वेदभाषाभाष्य आठवाँ भाग (सजिल्द)	५०.००
३९.	ऋग्वेदभाषाभाष्य (नवाँ भाग)	
	सप्तम मण्डल पहला भाग (सजिल्द)	२५.००

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
४०.	ऋग्वेदभाषाभाष्य सप्तम मण्डल द्वितीय भाग सजिल्द (पं. आर्यमुनि)	३५.००
४१.	ऋग्वेदभाषाभाष्य अष्टम मण्डल (सजिल्द)	
४२.	ऋग्वेदभाषाभाष्य नवम मण्डल (सजिल्द)	
४३.	ऋग्वेदभाषाभाष्य दसवां मण्डल प्रथम भाग सजिल्द (स्वा. ब्रह्ममुनि)	४५.००
४४.	ऋग्वेदभाषाभाष्य दसवां मण्डल द्वितीय भाग सजिल्द (स्वा. ब्रह्ममुनि)	५०.००
४५.	यजुर्वेदभाषाभाष्य पहला भाग (सजिल्द)	१००.००
४६.	यजुर्वेदभाषाभाष्य दूसरा भाग (सजिल्द)	३७५.००

स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक विद्यामार्तण्ड

४७.	सामवेद अध्यात्मिक मुनिभाष्य (पूर्वार्चिक)	
४८.	सामवेद अध्यात्मिक मुनिभाष्य (उत्तरार्चिक) (दोनो खण्डों का सम्मिलित मूल्य)	४००.००
४९.	अथर्ववेदभाष्य – (काण्ड १ से २०) तीन भाग का एक सेट	१५००.००

विविध

५०.	गोकरुणानिधि (बढ़िया)	५.००
५१.	स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश	५.००
५२.	स्वीकारपत्र	३.००
५३.	आर्योद्देश्यरत्नमाला (हिन्दी)	५.००

सिद्धान्त ग्रन्थ

५४.	सत्यार्थप्रकाश (सजिल्द बढ़िया)	१००.००
५५.	आर्याभिविनय (बड़ा आकार सजिल्द)	३०.००
५६.	आर्याभिविनय (बड़ा आकार अजिल्द)	७.००
५७.	आर्याभिविनय (गुटका अजिल्द)	७.००

कर्मकाण्डीय

५८.	वैदिक नित्यकर्मविधि	२५.००
५९.	पञ्चमहायज्ञविधि	१२.००
६०.	विवाह–पद्धति	२०.००
६१.	संस्कारविधि (सजिल्द)	७०.००

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
६२.	हवनमन्त्राः (बड़ा आकार)	५.००

पाखण्ड–खण्डन और शंका–समाधान ग्रन्थ

६३.	अनुभ्रमोच्छेदन	
६४.	भ्रमोच्छेदन (साधारण)	४.००
६५.	भ्रमोच्छेदन (बढ़िया)	१०.००
६६.	भ्रान्तिनिवारण	
६७.	शिक्षापत्रीध्वान्त–निवारण (स्वामीनारायण मतखण्डन)	२.००
६८.	वेदविरुद्धमत–खण्डन	१०.००
६९.	वेदान्तिध्वान्तनिवारण	२.००
७०.	शास्त्रार्थ काशी	८.००
७१.	शास्त्रार्थ हुगली (प्रतिमा–पूजन विचार)	६.००
७२.	सत्यधर्म विचार (मेला चान्दापुर)	७.००
७३.	शास्त्रार्थ जालंधर	३.००
७४.	शास्त्रार्थ अजमेर	३.००
७५.	शास्त्रार्थ बरेली (सत्यासत्य विवेक)	८.००
७६.	शास्त्रार्थ मसूदा	५.००
७७.	शास्त्रार्थ उदयपुर	४.००
७८.	शास्त्रार्थ फिरोजाबाद	१०.००
७९.	महर्षि दयानन्द के शास्त्रार्थ (सजिल्द)	४०.००

शिक्षा व व्याकरण ग्रन्थ (वेदाङ्ग प्रकाश)

८०.	वर्णोच्चारण शिक्षा	१२.००
८१.	सन्धिविषय	४०.००
८२.	नामिक	
८३.	कारकीय	१०.००
८४.	सामासिक	४०.००
८५.	स्त्रैणताद्धित	
८६.	अव्ययार्थ	५.००
८७.	आख्यातिक (अजिल्द)	१५०.००

शेष भाग अगले अंक में.....

भारत में वैदिक युग के सूत्रधार – स्वामी विरजानन्द जी दण्डी
(जन्म–१७७८ई. – निर्वाण १८६८ ई.)

– आचार्य चन्द्रशेखर

१. आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती के विद्यादाता एवं पथ–प्रदर्शक महान् गुरु विरजानन्द दण्डी (बचपन का नाम ब्रजलाल) का जन्म पूज्य पिता श्री नारायणदत्त के भरद्वाज गोत्र सारस्वत ब्राह्मण कुल में १७७८ ई. में करतापुर, जिला जालन्धर (पंजाब) में हुआ था।

२. पाँच वर्ष की आयु में चेचक के कारण नेत्र–ज्योति चली गई, परन्तु विधाता की कृपा से बुद्धि विलक्षण स्मरणशक्ति के रूप में प्राप्त हुई। आठ वर्ष में यज्ञोपवीत संस्कार एवं गायत्री दीक्षा के बाद पिता से संस्कृत का ज्ञानार्जन प्रारम्भ किया। बारहवें वर्ष में माता–पिता की मृत्यु के बाद तो सदा के लिए घर छोड़ दिया।

३. ऋषिकेश में तीन वर्ष तक साधना व एक लाख गायत्री मन्त्र का जप गंगा के पावन जल में आकंठ करने से अद्भुत प्रतिभा का वरदान प्राप्त हुआ। स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती से संन्यास की दीक्षा १७९८ ई. में प्राप्त करके संस्कृत व्याकरण पढ़ना प्रारम्भ किया। पूर्णानन्द जी ने विरजानन्द जी को महाभाष्य पढ़ने के लिए प्रेरित किया।

४. हरिद्वार से वे कनखल पहुँचे और कनखल शब्द का अर्थ बताते हुए उन्होंने कहा– को न खलस्तरति कनखलो नाम। सोरों और गंगा के किनारे स्थित नगरों का भ्रमण करते हुए सन् १८०० ई. में काशी पहुँचे। भिक्षाटन न करने के कारण दो–तीन दिन निराहार रहना पड़ा। महाभाष्य, मनोरमा, शेखर, न्याय मीमांसा और वेदान्त का अध्ययन किया। इस तरह अनेक शास्त्रों का अध्ययन किया और विद्वानों में प्रतिष्ठा प्राप्त की। उनके गुरु पं. विद्याधर और गौरीशंकर थे। वे २१ वर्ष की आयु में काशी गये काशी के विद्वानों में उनकी गणना थी। वे ''प्रज्ञाचक्षु'' की उपाधि से विभूषित हुये। जाने–आने के लिए पालकी व्यय तथा दक्षिणा मिलने लगी। दक्षिणा को वो अपने शिष्यों में बाँट देते थे।

५. बनारस से गया की यात्रा के बीच जंगल में लुटेरों ने लूटने की कोशिश की। ग्वालियर रियासत ने अपने सैनिक भेजकर स्वामी जी की रक्षा की और अपने डेरे पर पाँच दिन तक ठहराया और उन पंडित के साथ ज्ञान चर्चा की। दण्डी स्वामी ने गया में एक वर्ष तक ठहरकर वेदान्त ग्रन्थों का अध्ययन किया।

६. गया से कोलकाता जाकर साहित्यदर्पण, काव्यप्रकाश, रसगंगाधर, कुवलयानन्द आदि काव्यशास्त्रों के अध्ययन के साथ दर्शन, आयुर्वेद, संगीत, वीणा–वादन, योगासन तथा फारसी भाषा का ज्ञान अर्जित किया। कोलकाता में स्वामी जी के अध्ययन–अध्यापन की योग्यता की प्रशंसा विद्वानों में हुई।

७. कोलकाता से 'सोरों' आकर संस्कृत पढ़ाने लगे। मई १८३२ ई. में दण्डी जी गंगा में खड़े होकर विरचित विष्णु स्तोत्र का पाठ कर रहे थे। उनके शुद्ध उच्चारण से प्रभावित होकर अलवर के राजा विनय सिंह आपको श्रद्धा के साथ संस्कृत पढ़ाने के लिए अलवर ले गये। अलवर में कुछ माह रहकर स्वामी जी ने राजा को स्वलिखित शब्दबोध (१८३२ ई. के उत्तरार्ध), लघु कौमुदी, विदुर–प्रजागर, तर्क संग्रह, रघुवंश आदि पढ़ाये और राजा संस्कृत में सामान्य संभाषण करने लगे थे। फिर दण्डी जी ने अलवर छोड़ने का निश्चय कर लिया। विदाई के समय राजा ने ढाई हजार रुपये देकर सम्मान के साथ विदा किया। कालान्तर में राजा ने अपने पुत्र शिवदान सिंह के जन्म (१४ सितम्बर, रविवार) के शुभ अवसर पर दण्डी जी को हजार रुपये और पंद्रह रुपये मासिक सहयोग भी किया।

८. स्वामी जी अलवर से भरतपुर के शासक बलवन्त सिंह के यहाँ (१८३६ ई. के लगभग) पहुँचे और विश्राम किया। राजा ने स्वामी जी की विद्या से प्रभावित होकर रुकने को कहा, परन्तु स्वामी जी के चलने के आग्रह पर ४०० रुपये एक दुशाला भेंट में दिया। स्वामी जी भरतपुर से मथुरा पहुँचे। फिर मुरसान (राजा टीकमसिंह) का आतिथ्य स्वीकार करके वहाँ से बेसवाँ जाकर (राजा गिरिधर सिंह)

के अतिथि रहकर सोरों में पढ़ाने लगे। कुछ वर्षों के बाद रुग्ण हो जाने पर अचेत तक हो गये।

९. सोरों से मथुरा जाने का निश्चय किया। सेवक और बैलगाड़ी चालक को किराया भाड़ा देने तक के रुपये नहीं थे। ईश्वर का विश्वास कर चल पड़े। बिलराम निवासी धनपति दिलसुखराय (१८५७ ई. में अंग्रेज सरकार की सहायता के कारण राजा की उपाधि) ने स्वामी जी को पाँच अशर्फियाँ और आठ रुपये भेंट किये।

१०. मथुरा में स्वामी जी का आगमन १८४६ ई. में हुआ और १८६८ ई. तक (२२वर्ष) संस्कृत पठन-पाठन किया। दण्डी जी के गुरुभाई पं. किशन सिद्ध चतुर्वेदी और शिवानन्द मथुरा में रहते थे। यहाँ रहकर पढ़ाना प्रारम्भ किया। योगेश्वर श्री कृष्ण की जन्मस्थली मथुरा में युगद्रष्टा स्वामी विरजानन्द ने आर्ष पठन-पाठन, वैदिक साहित्य के संरक्षण व अध्ययन, पाखण्ड और कुरीतियों के निवारण तथा भारत के स्वाभिमान औरस्वतन्त्रता के रक्षण का संकल्प अपनी पाठशाला से प्रारम्भ किया। देश के १८५७ ई. के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में स्वामी जी के विचारों का प्रभावशाली योगदान रहा। हिन्दू समाज व मुसलमान स्वामी जी को अपना मुखिया (बुजुर्ग) मानते और सम्मान करते थे। स्वामी वेदानन्द सरस्वती ने माना था कि दण्डी जी के शिष्यों ने १८५७ के स्वाधीनता संग्राम में भाग लिया था। चौधरी कबूलसिंह ने मीर मुश्ताक मीर इलाही मिरासी का उर्दू में लिखा दस्तावेज पत्रिका को दिया था, जिसका हिन्दी अनुवाद पत्रिका में छपा। इसके अनुसार १८५६ ई. में मथुरा के जंगलों में दण्डी जी की अध्यक्षता में एक पंचायत हुई थी, जिसमें अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह की रचना की गयी थी। मथुरा निवासी शिष्य नवनीत कविवर के स्वामी दण्डी जी विषयक कवित्त से उनके अंग्रेजी सत्ता के प्रति विद्रोह-भावना का पता लगता है सम्प्रदायवाद वेदविहित विवर्जित पै, शासन विदेशिन को नासन प्रचण्डी ने। अगारे ही उदण्ड भय उठाय दण्ड, चण्ड हवै प्रतिज्ञा करी। प्रज्ञाचक्षु दण्डी ने १८५९ ई. में आकर कौमुदी के स्थान पर अष्टाध्यायी पढ़ाने का निश्चय किया और वैष्णव विचारधारा, मूर्तिपूजा, भागवत का खंडन करने लगे। उन्होंने इस समय वाक्यमीमांसा १८५९ई. में लिखी और बाद में उन्होंने पाणिनी सूत्रार्थ प्रकाश की रचना की। स्वामी दयानन्द के उदयपुर प्रवास के समय मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या को बताया था कि स्वामी विरजानन्द जी को अष्टाध्यायी पढ़ाने की प्रेरणा देने वाले स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती थे। दण्डी जी ने बनारस और मथुरा में दाक्षिणात्य ऋग्वेदी ब्राह्मण के मुख से अष्टाध्यायी के सूत्र सुने और सुनकर कंठस्थ किये।

११. गुरु विरजानन्द की इस पाठशाला में स्वामी दयानन्द सरस्वती का विद्या प्राप्ति हेतु आना नवम्बर १८६० (१९१७ वि. कार्तिक मास शुक्ल पक्ष द्वितीया बुधवार को हुआ। महान् गुरु विरजानन्द दंडी और पढ़ने वाले तेजस्वी शिष्य स्वामी दयानन्द सरस्वती) के परस्पर सम्मिलन से भारत में प्राचीन वैदिक संस्कृति के सरंक्षण के क्रांतिकारी युग का सूत्रपात हुआ।

१२. स्वामी विरजानन्द दंडी अद्‌भुत विलक्षण प्रतिभा-सम्पन्न, व्याकरण, शास्त्र के, सूक्ष्म-द्रष्टा, विद्या-विलासी गुरु, राजाओं को नीति, संस्कृति और राष्ट्र की शिक्षा देने वाले तथा भारतीय संस्कृति का गुणगान करने वाले राष्ट्र-प्रेमी और राष्ट्र-भक्त महात्मा थे।

१३. दंडी स्वामी का निर्वाण १४ सितम्बर १८६८ई. को मथुरा में हुआ था। उनके देहावसान का समाचार सुनकर प्रिय शिष्य दयानन्द ने कहा- आज व्याकरण का सूर्य अस्त हो गया। यह स्वामी दयानन्द की अपने गुरु के प्रति सच्ची भावना थी। अपने गुरु को दिये वचन के अनुसार अपना सम्पूर्ण जीवन संस्कृति के सरंक्षण और भारत माता के उत्थान में लगा दिया।

१४. भारत माता के यह महान् प्रज्ञा-चक्षु, तेजस्वी संन्यासी संसार से जाते हुए एक दिव्य ज्योति दयानन्द के रूप में दे गए। भारतीय इतिहास में विरजानन्द दंडी का नाम सदासूर्य की भाँति प्रकाशित रहेगा।

ऐसे महान् गुरु को हमारा श्रद्धा के साथ शत्-शत् नमन।

- नई दिल्ली

चलभाष- ०९८७१०२०८४४

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एक मात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद–पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्ण रूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोध कर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों से भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युत पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाके फोड़कर जलाते हैं असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी–छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थिति होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(०१ से १५ जनवरी २०१६ तक)

१. देवमुनि, अजमेर २. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर ३. श्रीमती तारावन्ती, नई दिल्ली ४. श्रीमती ओमलता चौहान, कोटा, राज. ५. श्री महावीर यादव, जयपुर, राज. ६.श्रीमती सुमन सिंह, अजमेर ७. श्री कन्हैयालाल आर्य, गुडगांव, हरियाणा ८. श्री वेदप्रकाश, रोजड़ ९. श्रीमती उत्पल कँवर, मुबंई, महाराष्ट्र १०. श्री सदानन्द आर्य, हरिद्वार, उत्तराखण्ड़ ११. श्री राजू विश्वकर्मा, गोरखपुर, उ.प्र. १२. श्री अतुल गुप्ता, गाजियाबाद, उ.प्र. १३. जेनिथ एन्टरप्राइजेज, दिल्ली १४. श्री अविनाश कपूर, नई दिल्ली १५. श्री धर्मवीर सिंह, नई दिल्ली १६. श्रीमती जेथी बाई, अजमेर १७. श्री माँगीलाल गोयल, अजमेर १८. स्वास्तिकामा चेरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती, महाराष्ट्र १९. श्री रजनीश कपूर, नई दिल्ली २०. श्री रामस्वरूप आर्य, बाँदीकुई, राज. २१. श्री ब्रह्मदेव वेदालंकार, गाजियाबाद, उ.प्र. २२. श्री विवेकानन्द शास्त्री, रोहतक, हरियाणा २३. श्रीमती कँचन आर्या, नई दिल्ली २४. श्रीमती रेनू गुप्ता, दिल्ली २५. श्रीमती कुक मीना, डीला, गुजरात २६. श्री विनय कुमार झा, जयपुर,राज. २७. कोशल्या माता, बीकानेर, राज. २८. श्री रामविलास/श्रीमती रामकन्या देवी, जोधपुर, राज. २९. श्री शिवदास/श्रीमती शोभा बाहेती, अजमेर ३०. सुश्री अंशिका, ब्यावर, राज. ३१. श्री राजेश साहू, भरतपुर, राज. ३२. श्री सूरज विक्की, दिल्ली ३३. श्री सत्यप्रकाश आर्य, दिल्ली ३४. डॉ. नवीन माथुर, अजमेर ३५. श्री आनन्द अग्रवाल, फरीदाबाद ३६. श्री जयकिशोर, परली बैजनाथ, महाराष्ट्र ३७. कृष्ण सिंह जीराठी, झज्जर, हरियाणा ३८. रामस्वरूप आर्य, बाँदीकुई, राज.।

– परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(०१ से १५ जनवरी २०१६ तक)

१. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर २. श्री पदमाराम, नागौर, राज. ३. श्री जगदीश प्रसाद आर्य, नागौर, राज. ४. श्री माणकचन्द जैन पटवारी, नागौर,राज. ५. श्री शन्तिस्वरूप टिक्कीवाल, जयपुर, राज. ६. श्री राधेश्याम शर्मा, अजमेर ७. श्रीमती तारावन्ती, नई दिल्ली ८. डॉ. मोतीलाल शर्मा, जयपुर, राज. ९. श्री सुरेश नवाल/श्रीमती मंजू नवाल, अजमेर १०. श्रीमती निर्मला मेहता, नई दिल्ली ११. श्री आजाद सिंह, नई दिल्ली १२. श्री मुकेश सोनी, विजयनगर, अजमेर १३. पतंजलि योग समिति, विजयनगर, अजमेर १४. श्रीमती सुशीला आर्या, मेरठ, उ.प्र. १५. श्री ओकर्ड/श्री फलोरीक्लचरल, तिलोरा १६. श्रीमती कमला कुशवाहा, कानपुर, उ.प्र. १७. श्री महावीर प्रसाद आर्य, झुझनु, राज. १८. श्री राजेश त्यागी, अजमेर१९. श्री यज्ञदेव सोमानी, राजगढ़ २०. श्री अविनाश भार्गव, बीकानेर, राज. २१. डॉ. चन्द्रमणि, फरीदाबाद, हरियाणा २२. श्रीमती तारावन्ती, नई दिल्ली २३. श्री बाबूराम शर्मा, करनाल, हरियाणा २४. श्री अतुल कु मार गुप्ता, मुरादाबाद, उ.प्र. २५. श्री राजेश कुमार, नई दिल्ली २६. श्री रिषभ गुप्ता, अम्बाला केन्ट, पंजाब २७. श्रीमती प्रेमलता शर्मा, अजमेर २८. श्री कृष्ण सिंह राठी, झज्जर, हरियाणा २९. श्री जीत सिंह, सोनीपत, हरियाणा ३०. श्री शशि चड्ढा, पानीपत, हरियाणा ३१. डॉ. सुनीता, जीन्द, हरियाणा ३२. श्री तरुण प्रधान, अजमेर ३३. श्री अजीम रावत, गाजियाबाद, उ.प्र. ३४. श्री विजयप्रकाश शर्मा, अजमेर ३५. श्री यशपाल दिल्ली।

– परोपकारिणी सभा, अजमेर।

जिज्ञासा समाधान - १०४

- आचार्य सोमदेव

१. जिज्ञासा - मनुष्य योनि, कर्म योनि व भोग योनि दोनों है, जबकि अन्य योनियाँ केवल भोग योनि हैं। मनुष्य जो भी शुभ अथवा अशुभ/मिश्रित कर्म करता है, उसके सुख/दु:ख रूपी फल व कर्मों एवं फलों की वासनायें (संस्कार) कर्माशय में एकत्र होते रहते हैं। ईश्वर की न्याय प्रक्रिया से उनके तीन रूपों में जाति, आयु व भोग रूपी फल अवश्य भोगने पड़ेंगे चाहे सैकड़ों वर्ष समाप्त हो जावें। यहाँ मुझे शंका है। वेदों व वैदिक पुस्तकों में पढ़ने को मिलता है कि ईश्वर भक्ति से कर्म नष्ट हो जाते हैं।

उदाहरणार्थ:- **त्वं हि विश्वतोमुख:..... शोशुचदधम्।** - ऋ. अष्टक अध्याय १-७-५-६

स्थिरा व: सन्त्वायुधा.....मर्त्यस्य मायिन:।

- ऋ. १-३-१८-२ वर्ग मन्त्र

उपरोक्त उदाहरणों के अतिरिक्त भी अन्य कई स्थानों पर ईश्वर भक्ति (विवेक ख्याति अपर वैराग्य सम्प्रज्ञात समाधि, पर वैराग्य व असम्प्रज्ञात समाधि) द्वारा पापों का नाश होना बताया गया है। कृपया, स्पष्ट करें कि अशुभकर्मों/पापकर्मों के फलों से क्या बचा जा सकता है? मोक्ष प्राप्ति की अवधि ३१ नील १० खरब ४० अरब वर्षों के बाद पुन: जन्म लेने पर क्या पुराने कर्म-फल-संस्कार बचे रहते हैं? यदि मोक्ष प्राप्ति के पूर्व के कर्म फल-संस्कार बचे रहते हैं तो क्या मोक्ष प्राप्ति के बाद पुन: जन्म लेने पर उन पुराने संस्कारों को भोगना पड़ेगा?

२. योग के आठ अंगों में प्रथम 'यम' के पाँच भागों में अहिंसा व सत्य बोलना भी शामिल है- सत्य बोलना स्वयं में ही हिंसा का पर्याय है। कहा जाता है कि सच बोलने में शहद मिलाकर बोले- यह संभव नहीं लगता, सच तो कड़वा ही होता है। मैं प्रतिदिन पौराणिकों से अन्धविश्वासों के वेदानुकुल सच बोलकर मेरे मित्रों को भी फटकारता रहता हूँ। कृपया, सत्य व अहिंसा का कैसे पालन किया जावे- स्पष्ट करे। मैं महर्षि के पद-चिह्नों पर चलते हुए कड़वा सच ही बोलता हूँ ।

- एम.एल. गोयल, वरिष्ठ उपाध्यक्ष आर्यसमाज केसरगंज, अजमेर।

समाधान- (क) जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है, वह चाहे मनुष्य योनि में हो या किसी और योनि में। मनुष्य योनि में यह विशेषता है कि इस योनि में मनुष्य पाप-पुण्य रूप कर्म कर सकता है, जबकि अन्य योनि में यह नहीं है। इसमें कारण है मनुष्य योनि का भोग और कर्म योनि होना और मनुष्य से इतर योनियों का भोग योनि होना। इन भोग योनियों में भोगना होते हुए भी स्वतन्त्रता है, वह स्वतन्त्रता भले ही सीमित हो, किन्तु स्वतन्त्रता तो है। एक जानवर के सामने तीन मार्ग आ जाएँ तो ऐसी स्थिति में वह जानवर किसी भी रास्ते से जा सकता है, यह उसकी अपनी स्वतन्त्रता है। ऐसे ही अन्य स्थलों पर देखा जा सकता है।

अब आपकी बात पर विचार करते हैं कि किये हुए पाप क्षमा होते हैं या नहीं? इस विषय में महर्षि दयानन्द ने प्रश्न उठाकर उत्तर दिया है- ''प्रश्न ईश्वर अपने भक्तों के पाप क्षमा करता है वा नहीं? उत्तर - नहीं क्योंकि जो पाप क्षमा करे, तो उसका न्याय नष्ट हो जाये और सब मनुष्य महापापी हो जाएँ, क्योंकि क्षमा की बात सुन के ही उनको पाप करने में निर्भयता और उत्साह हो जाये। जैसे राजा अपराध को क्षमा कर दे तो वे उत्साह पूर्वक अधिक से अधिक बड़े-बड़े पाप करें, क्योंकि राजा अपना अपराध क्षमा कर देगा और उनको भी भरोसा हो जाए कि राजा से हम हाथ जोड़ने आदि चेष्टा कर अपने अपराध छुड़ा लेंगे और जो अपराध नहीं करते वे भी अपराध करने से न डरकर पाप करने में प्रवृत्त हो जाएँगे। इसलिए सब कर्मों का फल यथावत् देना ही ईश्वर का काम है, क्षमा करना नहीं।'' स.प्र. ७ यहाँ महर्षि की दृढ़ मान्यता है कि किए हुए पाप कर्म क्षमा नहीं होते। उनका तो फल भोगना ही पड़ता है।

महाभारत में कहा है-

येषां ये यानि कर्माणि प्राक्सृष्ट्यां प्रपेदिरे।
तान्येव प्रतिपद्यन्ते सृज्यमाना: पुन: पुन:।।

अर्थात् पूर्व सृष्टि में जिस-जिस प्राणी ने जो-जो कर्म किये होंगे, फिर वे ही कर्म उसे यथापूर्व प्राप्त होते रहते हैं। जब अयुक्त कर्म इतनी दूर तक पीछा करते हैं तो इसी जन्म में किये पापों से बिना भोगे निवृत्ति पा लेना कैसे सम्भव हो सकता है? कृतकर्म का भोगे बिना छुटकारा नहीं मिल सकता- यह परमेश्वर का नियम है। अपने इस नियम को परमेश्वर स्तुति करने वाले भक्तों के लिए शिथिल नहीं कर सकता। यदि वह पापों को क्षमा करे तो उसका न्याय नष्ट हो जाए और सब मनुष्य पापी हो जाएँ। हाथ-पैर

जोड़ने से परमात्मा अपराधियों को छोड़ देता है, यह जानने पर लोग निःशंक होकर पाप में प्रवृत्त होंगे। ऐसी अवस्था में ईश्वर लौकिक शासकों के समान हो जायेगा। जो उसकी स्तुति (चमचागिरी) करेंगे, वे उनके अपने होंगे। उनके प्रति उसका व्यवहार दया और सहानुभूति का होगा। इसके विपरीत जो उसकी स्तुति आदि नहीं करेंगे, उनके प्रति वैरभाव नहीं तो उपेक्षा का भाव तो रखेगा ही। तब वह सब प्राणियों के लिए एक जैसा नहीं रहेगा। अपनों का उपकार करना परोक्ष रूप से अपने पर उपकार करना ही है। इसमें स्वार्थ निहित है। इस स्वार्थ के कारण परमात्मा खुशामदियों से घिरे हुए शासक के समान होगा, जिसमें राग-द्वेष, ईर्ष्या, घृणा, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि सब शेष होंगे। इस प्रकार के जगन्नियन्ता परमेश्वर से न्याय की आशा कैसे की जा सकती है? वास्तव में तो परमेश्वर तटस्थ भाव से सब जीवों के कर्मों का साक्षी रहते हुए ही न्याय परायण हो सकता है और है। उसके व्यवहार में दया और न्याय का विलक्षण सम्मिश्रण अथवा समन्वय है।

सामान्यतः मनुष्य दण्ड के भय से अपराध करने से डरते हैं। यदि यह विश्वास हो जाये कि अपराध करने पर पकड़े नहीं जायेंगे और पकड़े भी गये तो बिना दण्ड पाये छूट जाएँगे तो असंख्य मनुष्य दुष्कर्मों-अपराधों के अभ्यस्त हो जायेंगे। किसी पीर पैगम्बर पर ईमान लाने मात्र से किये हुए कर्मों का दण्ड पाये बिना इससे कोई छूट नहीं सकता है। किये हुए पाप का फल तो भोगना ही पड़ेगा।

आपने जो प्रमाण दिये हैं, अब उस पर विचार कर लेते हैं। **''स्थिरा वः सन्त्वायुधा.....मा मर्त्यस्य मायिनः।।''** इस मन्त्र में से पाप क्षमा वाली बात आपने कहाँ से ली, ज्ञात नहीं हो पाया। इसमें परमेश्वर की ओर से मनुष्यों को उपदेश है अथवा आशीर्वाद है कि तुम्हारे आयुध शक्ति सामर्थ्य से रहें, जिससे शत्रुओं को पराजित् किया जा सके और शत्रुओं का राज्यादि ऐश्वर्य कभी न बढ़े। दूसरा जो मन्त्र आपने उद्धृत किया है, उसमें जो **''अप नः शोशुचदधम्''** ये शब्द आये हैं। इनके द्वारा प्रार्थना की गई है कि हमारे पाप दूर कराइये। परमेश्वर से प्रार्थना की गई है पाप दूर करने की। अब विचारणीय यह है कि यहाँ प्रार्थना किये गये (जो हो चुके) उन पापों को दूर करने की है या पाप भावना को दूर करने की?

पाप दो स्थितियों में नष्ट होते हैं, हो सकते हैं अथवा परमात्मा पाप नष्ट करता है, कर सकता है। एक जो पाप किये हैं, उनके फल भोगने पर वे पाप नष्ट हो जाते हैं। दूसरा जो हमारे मन में पाप भावना है, उसको परमेश्वर शुद्ध भावना से उपासना करने पर नष्ट करता है। ऐसा मानने पर कोई सिद्धान्त हानि नहीं है। और यदि पाप किये जाने के बाद उनका फल न देकर परमात्मा क्षमा कर देता है। ऐसा मानते हैं तो सिद्धान्त की हानि होती है। ऐसी मान्यता किसी शास्त्र वा ऋषि ने नहीं मानी है। यह तो अवश्य है कि दयालु परमेश्वर हमारे पाप नष्ट करता है। वह हमें हमारे पापों का फल भुगाकर नष्ट करता है इसमें परमेश्वर की न्याय व दया निहित है। परमात्मा शुद्ध अन्तःकरण से की गई प्रार्थना से भी पाप अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोक आदि की भावना को नष्ट करता है। ऐसी मान्यता को मानने में कोई हानि नहीं है। हानि तो पाप क्षमा करने में है।

(ख) समाधि से पापों का नाश होता है, इसका तात्पर्य है अविद्या आदि क्लेशों का नाश होता है। अब अविद्या आदि क्लेश क्षीण होते हैं तो काम, क्रोध आदि पाप भी क्षीण होते हैं। दूसरा, इसमें विद्वानों की दो मान्यताएँ हैं- एक जो समाधि से अविद्या आदि क्लेशों के साथ-साथ कर्माशय को भी नष्ट होना मानते हैं, जो कि शास्त्र इनकी बात को अधिक पुष्ट करता है। इस स्थिति में अर्थात् क्लेशों के नष्ट होने की स्थिति में जो भी योगी आयेगा, उसके समस्त कर्म परमेश्वर नष्ट कर देता है। (पाप-पुण्य रूप दोनों कर्म) इसमें परमेश्वर के न्याय में भी कोई दोष नहीं आयेगा, क्योंकि जो भी इस स्थिति को प्राप्त करेगा, उसी के कर्माशय को नष्ट करेगा अन्य के नहीं । दूसरी मान्यता विद्वानों की है कि मुक्ति से पहले सब कर्म नष्ट नहीं होते केवल अविद्या आदि क्लेश ही नष्ट होते हैं, इस बात को मानने वाले के पास कोई विशेष प्रमाण नहीं है। इनकी मान्यता है कि जो मोक्ष होने से पहले कर्म शेष थे, उनके आधार पर मुक्ति से लौटकर जीवात्मा उनको भोगता है। जिनकी मान्यता ये है कि समस्त क्लेशों के साथ कर्म भी नष्ट हो जाते हैं। वे मुक्ति से लौटने में परमात्मा की दया को देखते हैं कि मुक्ति की अवधि पूरी होने के बाद परमेश्वर जन्म देकर मुक्ति का प्रयास करने का पुनः अवसर दे रहे हैं।

(ग) आप सत्य को हिंसा की कोटि में रख रहे हैं, हिंसा ही मान रहे हैं, जबकि ऐसा है नहीं। सत्य और अहिंसा की परिभाषा को ठीक-ठीक जानने पर ऐसा प्रतीत नहीं होगा। महर्षि पतञ्जलि ने तो सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य आदि को अहिंसा के पोषक माना है, ये सब अहिंसा को

ही सिद्ध करने वाले हैं। आपने जो यह कहा कि पौराणिकों और अन्धविश्वासियों को सत्य बोलकर फटकारता हूँ तो उनको दु:ख होता है। इस दु:ख होने में सत्य दोषी नहीं है, अपितु वह व्यक्ति दोषी है जो सत्य को स्वीकार नहीं कर रहा और ऊपर से दु:खी हो रहा है।

अहिंसा की परिभाषा ऋषि ने लिखी- ''सब प्रकार से, सब काल में, सब प्राणियों के साथ वैर छोड़ के प्रेम-प्रीति से वर्तना। इस परिभाषा के अनुसार यदि व्यक्ति सत्य बोलता है तो सत्य हिंसक हो ही नहीं सकता। यदि व्यक्ति वैर भाव रखते हुए किसी को दु:खी करने के लिए सत्य बोलता है तो निश्चित ही वह हिंसक होगा। देखना यह है सत्य किस प्रयोजन से बोला जा रहा है। सत्य का ध्येय अहिंसा है, धर्म है, परोपकार है, ईश्वर है ऐसी स्थिति में सत्य को हिंसा कहना सर्वथा असंगत ही तो है।

कोई व्यक्ति हमसे दु:खी न हो, ऐसा करने के लिए यदि हम सत्य को छोड़ असत्य बोलते हैं तो भले ही उस व्यक्ति को तात्कालिक दु:ख न हो, किन्तु उस असत्य से कालान्तर में वह अवश्य पीड़ित होगा और इसके विपरीत सत्य बोलने से तात्कालिक रूप से भले ही थोड़ी देर के लिए दु:खी हो, किन्तु कालान्तर में उसको सत्य से अपार सुख मिलेगा। ऐसा होने से सत्य को हिंसा नहीं कहा जा सकता।

आपने कहा- सत्य कड़वा ही होता है सो ठीक नहीं है। सत्य को तो शास्त्र ने अमृत कहा है। हाँ, कड़वाहट तब होती है, जब कोई सत्य को सुनना और समझना न चाहता हो। यदि व्यक्ति यथार्थ में सत्य को जानना समझना चाहता है तो उसको कभी भी सत्य कड़वा नहीं लगेगा, वरन् वह सत्य उसको अमृत रूप लगेगा। यदि सत्य अहिंसा न होकर हिंसा होता तो ऋषि कभी इसको योग का अंग न बनाते। वेद व शास्त्र सत्य की महिमा न कहते। वेद तो असत्य को छोड़ सत्य के प्राप्त होने को कहता है- **इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि** मैं असत्य से छूट सत्य को प्राप्त होऊँ। उपनिषद् में कहा है-

सत्यमेव जयति नाऽनृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः।
येना क्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम्।।

सर्वदा सत्य की ही विजय और झूठ की पराजय होती है, इसलिए जिस सत्य से चल के धार्मिक ऋषि लोग जहाँ सत्य की निधि - परमात्मा है, उसको प्राप्त होकर आनन्दित हुए थे और अब भी होते हैं, उसका सेवन मनुष्य लोग क्यों न करें? और भी- **न हि सत्यात्परमो धर्मो नानृतात्पातकं परम्।।**

यह निश्चित है कि न सत्य से परे कोई धर्म और न असत्य से परे कोई अधर्म है। इससे धन्य मनुष्य वे हैं जो सब व्यवहारों को सत्य ही से करते हैं और झूठ से युक्त कर्म किञ्चित मात्र भी नहीं करते हैं। ये सत्य की महिमा है, इसलिए सत्य को निंदित रूप से न देखें। जैसे अहिंसा सुख देने वाली है, वैसे ही सत्य भी सुख देने वाला है। अस्तु। **- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर।**

स्तुता मया वरदा वेदमाता-२७

अहं केतुरहं मूर्धा अहमुग्राविवाचनी।।

इस सूक्त का यह दूसरा मन्त्र है। यह एक महिला की घोषणा है, जिसमें आत्मविश्वास और योग्यता का समन्वय है। विवेचन की योग्यता बिना ज्ञान के नहीं आती। आजकल का ज्ञान हमें अर्थोपार्जन की क्षमता देता है, परन्तु अपने आप पर नियन्त्रण करने की क्षमता नहीं उत्पन्न करता। आजकल की शिक्षा उसे स्वार्थी बनाती है, उसका मूल कारण है- मनुष्य का सुविधाजीवी होना, दु:ख सहने की इच्छा और सामर्थ्य का अभाव होना। हमारे छोटे-छोटे बच्चों को लगता है, हम साधनों के बिना कैसे जी सकते हैं? समाचार पत्र में पढ़ा- एक सातवीं कक्षा की बच्ची ने आत्महत्या कर ली। कारण? उसने माता से चल दूरभाष (मोबाइल) माँगा। माँ ने कहा- बेटा, अभी तुम छोटी हो, तुम दसवीं उत्तीर्ण कर लो, तब ले देंगे। बस, लड़की को सहन नहीं हुआ, वह फाँसी लगा के मर गई। विचार करने की बात है, क्या मृत्यु के लिये यह कारण पर्याप्त है? मनुष्य क्या, कोई भी प्राणि मरने की इच्छा नहीं करता, मरने के नाम से भी डरता है, मृत्यु का अवसर आ जाये तो प्राणपण से संघर्ष करता है, संघर्ष में हराकर ही मृत्यु उसे जीतती है। यहाँ बिना लड़े ही हार मान ली है। मृत्यु की कामना वही करता है, जो जीवन में हार जाता है। छोटे-छोटे साधनों के बिना, सुविधाओं के बिना कैसे जीवित रहूँगा- यह भय ही मनुष्य को मारने के लिये आज पर्याप्त हो गया है।

मनुष्य को साधनों की अधिकता ने उतावला, असहिष्णु और भीरु बना दिया है। पुराने समय में छात्र को असुविधा में रहना सिखाया जाता था। ऐसा नहीं था कि छात्रों को सुविधायें दी नहीं जा सकती थीं, जब घर में, नगर में लोगों के पास सुविधाएँ हों, तो उन्हें क्यों नहीं दी जा सकतीं? मनुष्य को सुविधा में जीने की शिक्षा नहीं देनी पड़ती। धन-सम्पत्ति साथ आते ही उनका सुख उठाना आ जाता है। सुविधा में जीना सिखाने से असुविधा में जीना नहीं आता, परन्तु असुविधा में जीना सिखाने से सुविधा न मिलने पर, सुविधा समाप्त होने पर भी वह सरलता से सहज ही जीवन यापन कर सकता है।

आजकल बड़ी कम्पनियाँ बहुत सारा वेतन, साधन एवं अनेक सुविधायें देकर मनुष्य को भीरु बना देती हैं। उनके बिना वह जीवन की कल्पना ही नहीं करता। दुर्भाग्य से कभी साधन न मिले, नौकरी छूट जाये तो ऐसा व्यक्ति अनुचित-अनैतिक माध्यमों से धन कमाने में लग जाता है या आत्महत्या कर लेता है। इसी कारण ऋषि लोग तपस्या और कठिन जीवन की बात करते हैं। सुविधा-भोगी अपने साधनों का बँटवारा नहीं कर पाता, दूसरे को सहयोग करने में उसका विश्वास नहीं होता। सुविधा-भोगी मनुष्य को कभी साधनों से तृप्ति नहीं होती, वह सदा और अधिक के चक्र में उलझ जाता है। उसकी योग्यता उसे अधिक कमाने के लिये प्रेरित करती है। इस दुश्चक्र में वह पराजित हो जाता है, बीमार हो जाता है, अन्ततः मर जाता है।

आचार्य चाणक्य कहते हैं- शास्त्र मनुष्य को अपने पर नियन्त्रण करने की शिक्षा देता है। शास्त्र का अध्ययन करने से मनुष्य के अन्दर धैर्य उत्पन्न होता है। उसके अन्दर सहनशीलता बढ़ती है। चाहे जय मिले या पराजय, वे उसे विचलित नहीं करते। उसके अन्दर उचित-अनुचित, अच्छे-बुरे, न्याय-अन्याय को समझने का सामर्थ्य आता है। ऐसे व्यक्ति को विचारों की स्पष्टता, निर्णय की क्षमता और कार्य को सम्पन्न करने की योग्यता प्राप्त होती है। ऐसा व्यक्ति आत्मविश्वास से भरा होता है। उसके अन्दर भय नहीं रहता है। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है- जिसके अन्दर भय नहीं रहता, उसके अन्दर उदारता, सहिष्णुता, परोपकार आदि गुण सहज ही आ जाते हैं। ऐसा मनुष्य दूसरों के कष्टों को देखकर अपना सुख छोड़ देता है। उसके अन्दर नेतृत्व का गुण पूर्ण रूप से विकसित होता है, जो सब उत्तरदायित्व को स्वीकार करने के लिये तैयार रहता है वही घोषणा कर सकता है- मैं सबसे ऊँचा हूँ, मैं सब के लिये उत्तरदायी हूँ।

मनुष्य का स्वभाव होता है कि वह किसी भी गलती, भूल या अपराध की जिम्मेदारी दूसरे पर डालने का यत्न करता है। ऐसा व्यक्ति कह नहीं सकता कि मैं सर्वोपरि हूँ। मैं सबका नेता हूँ। उत्तरदायित्व के गुण के बिना नेतृत्व का गुण नहीं आ सकता। स्वार्थी और असहिष्णु व्यक्ति कभी नेता नहीं बन सकता। आजकल की शिक्षा से इन गुणों की आशा नहीं की जा सकती। आज मनुष्य योग्यता के बिना ही अधिकार की आशा करता है। आशा तो की जा सकती है, परन्तु उसका निर्वाह नहीं हो सकता। ज्ञान के बिना योग्यता नहीं आती, परिश्रम के बिना ज्ञान नहीं आता। यही कारण है कि आजकल के युवाओं में सामान्य रूप से इन गुणों की कमी देखी जाती है। योग्यता के बिना विचार में, वचन में एवं प्रामाणिकता का अभाव रहता है। जब आप किसी को कुछ कहते, बोलते, सुनते हैं, तो जब उससे उलट कर पूछा जाता है- क्या वास्तव में ऐसा है, आपके ऐसा कहने का आधार क्या है? सौ में नब्बे से अधिक व्यक्ति इधर-उधर झाँकने लगते हैं।

पुरानी शिक्षा जिसे अनुपयोगी समझते हैं, उसकी विशेषता है- वह शिक्षा मनुष्य को सहनशील, प्रामाणिक और उत्तरदायी बनाती है। आज किसी को कोई काम देकर आप निश्चिंत नहीं हो सकते, न तो कार्य होने का विश्वास है और न कार्य न हो पाने की सूचना। और यह कहा जाता है- तो क्या हो गया? हुआ तो कुछ नहीं, परन्तु उत्तरदायित्व का गुण समाप्त हो जाता है। इस मन्त्र के शब्द घोषणा करके कह रहे हैं- घर की गृहिणी योग्य है, समर्थ है, उत्तरदायी है और आत्मविश्वास से परिपूर्ण है। ऐसी नारी की कल्पना करना आज कठिन है, परन्तु वेदों का आदर्श तो यही कहता है।

क्रमशः .....

संस्था - समाचार

०१ से १५ जनवरी २०१६

यज्ञ एवं प्रवचन- जैसा कि विदित है, ऋषि उद्यान आर्यजगत् के उन स्थलों में से हैं, जहाँ पूरे वर्ष प्रतिदिन दोनों समय यज्ञ का अनुष्ठान अपरिहार्य रूप से किया जाता है। प्रात:काल यज्ञोपरान्त वेद के कुछ मन्त्रों का पाठ तथा महर्षि दयानन्द कृत वेदभाष्य का स्वाध्याय किया जाता है। रविवार प्रात:काल विशेष यज्ञ किया जाता है, जिसमें नगर निवासी सज्जन, माताएँ, बहनें, बच्चे सम्मिलित होते हैं और अपनी-अपनी आहुतियाँ प्रदान करते हैं। सायंकाल प्रतिदिन यज्ञ और महर्षि दयानन्द जी द्वारा पूना में दिये गये प्रवचन 'उपदेश मन्जरी' का पाठ एवं व्याख्यान होता है। प्रत्येक रविवार को सायंकाल गुरुकुल के ब्रह्मचारियों का भजन, प्रवचन होता है। यहाँ पर दर्शन, उपनिषद्, वर्णोच्चारण शिक्षा, रचना अनुवाद कौमुदी की कक्षायें निरन्तर चलती रहती हैं, जिसमें गुरुकुल के ब्रह्मचारियों के साथ-साथ आश्रमवासी संन्यासी, वानप्रस्थी, महिलायें और बाहर से आने वाले जिज्ञासु ज्ञान अर्जित करते रहते हैं। आर्य वीर दल का प्रशिक्षण कार्यक्रम सुबह-शाम नियमित रूप से होता है, जिसमें खेल-कूद, व्यायाम, जूडो कराटे, लाठी चलाने का अभ्यास आदि कराया जाता है। इसमें नगर के युवा वर्ग और बालक भी भाग लेते हैं। प्रतिदिन प्रात:काल सरस्वती भवन के प्रांगण में आसन, प्राणायाम, ध्यान आदि का अभ्यास कराया जाता है।

प्रात:कालीन सत्संग में ऋग्वेद के दसवें मण्डल के एक सौ पच्चीसवें सूक्त (वागाम्भृणी सूक्त) पर चर्चा करते हुए **डॉ. धर्मवीर जी** ने बताया कि वागाम्भृणी का अर्थ महती वाक् शक्ति या सबसे बड़ी आवाज है। इस सूक्त में परमात्मा के सामर्थ्य को बड़े ही वैज्ञानिक ढंग से समझाया गया है। परमात्मा बिना मुख के ही संसार के सब मनुष्यों को निरन्तर उपदेश कर रहा है। उसके मुख की तुलना में हमारे कान बहुत छोटे हैं। "**विश्वतो मुख:**" अर्थात् परमात्मा का पूरा संसार ही मुख है। परमेश्वर अपनी ज्ञान शक्ति से पृथिवी आदि आठ वसुओं, प्राण आदि ग्यारह रुद्रों, बारह मास, विद्युत, यज्ञ आदि का धारण करने वाला है। वह दिन और रात को धारण करता है। वह सोमरस आदि औषधि और यज्ञ कर्त्ताओं के सब प्रकार के उत्तम धन का धारण करने वाला है। इस सूक्त में चन्द्रमा को सोम कहा गया है। आरोग्य, उत्साह, आनन्द, बल, बुद्धि, शक्ति, सुन्दरता देने वाले पदार्थों का नाम सोम है। गिलोय औषधि को भी सोम कहते हैं। जो बुद्धि का नाश करने वाली शराब है, उसको सोम कहना उचित नहीं। संसार में परमात्मा की रचना से ही हम उसके सामर्थ्य को देखते हैं। यह सम्पूर्ण विश्व वेद की व्याख्या है। इस वेद वाणी से उसके स्वरूप का पता चलता है। ईश्वर ने यह संसार कैसे एवं किसके लिये बनाया? यह सब उसने वेद में बताया है। संसार के सभी पदार्थों के नाम वेद में परमात्मा ने बताये हैं। मनुष्यों के नाम बाद में रखे जाते हैं, किन्तु संसार के पदार्थों के नाम पहले ही वेद में ईश्वर ने बताये हैं। परमेश्वर के सब नाम उसके गुण, कर्म स्वभाव के अनुकूल हैं। जैसे ईश्वर और उसके नाम में नित्य सम्बन्ध है, वैसे ही वेद में बताये पदार्थों के नाम और पदार्थों का नित्य सम्बन्ध है। ज्ञान नित्य होने से शब्द और अर्थ का सम्बन्ध नित्य है। परमेश्वर नित्य है, उसकी वाणी भी नित्य है। संसार को ईश्वर ने बनाया है, इसलिये संसार के पदार्थों के नाम और गुण आदि के विषय में जैसा वह जानता है, वैसा मनुष्य अपने स्वाभाविक ज्ञान से नहीं जान सकता, इसलिए वेद पढ़ना आवश्यक है।

प्रात:कालीन सत्संग में **स्वामी मुक्तानन्द जी** ने कहा कि हम सब मानव जीवन को सफल बनाने के लिये प्रयासरत हैं। मानव जीवन श्रेष्ठ और सफल तभी बन सकता है, जब हम समय का सदुपयोग करते हुए पुरुषार्थ करें। हम शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक और आत्मिक स्तर पर उन्नति करके ही अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। मनुष्य शारीरिक और इन्द्रियों के विषयों के सुख से कभी सन्तुष्ट नहीं हो सकता। बुद्धि का प्रयोग करके हम अपने लक्ष्य को समय पर प्राप्त कर सकते हैं। शारीरिक बल लगाकर व्यक्ति पहलवान या खिलाड़ी बन जाता है। बुद्धि का उपयोग करके डॉक्टर, इंजीनियर या अध्यापक बन जाता है। मन लगाकर काम करता है, तो वह कलाकार बन जाता है। ठीक इसी प्रकार जब वह आत्मिक उन्नति के लिये पवित्र मन से श्रद्धापूर्वक कार्य करता है तो अपने

कार्य को शीघ्र कुशलतापूर्वक सम्पन्न कर लेता है। जब वह इन साधनों का दीर्घकाल तक निरन्तर सेवन करता है तो अपने क्षेत्र में सफल हो जाता है।

स्वामी आशुतोष जी ने प्रात:कालीन सत्संग में बताया कि वेद और धर्म का उपदेश कभी पुराना नहीं होता। जैसे प्रतिदिन उदय होने वाला सूर्य पुराना नहीं होता, इसी प्रकार हमारे जीवन का प्रत्येक दिन नया होना चाहिए, अर्थात् जो अब तक ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ, उसे प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिये। प्रत्येक सुबह को संकल्प लेना चाहिये कि आज के दिन का हम पूरा ठीक-ठीक उपयोग करेंगे।

प्रात:कालीन सत्संग में **आचार्य कर्मवीर जी** ने कहा कि ईश्वर को प्राप्त करने के लिये हमें बल की अत्यन्त आवश्यकता होती है। बल तीन प्रकार के होते हैं- शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक। जब हम वेद में बताये अनुसार ईश्वर की भक्ति (ज्ञान, कर्म, उपासना) करते हैं तथा उसकी शिक्षा, शासन और न्याय को मानते हैं, तब वह हमें तीनों प्रकार के बल देता है।

प्रतिदिन सायंकाल **उपाचार्य सत्येन्द्र जी** ''उपदेश मंजरी'' पर चर्चा करते हैं। महर्षि दयानन्द जी ने पूना में पहला व्याख्यान ईश्वर सिद्धि विषय पर दिया था। सांख्य दर्शन के सूत्र 'ईश्वरासिद्धे:' को पढ़कर पर्याप्त विचार किये बिना कुछ विद्वान् महर्षि कपिल को नास्तिक मानते थे। स्वामी दयानन्द जी ने सिद्ध किया कि महर्षि कपिल नास्तिक नहीं थे। वे प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द आदि प्रमाणों से ईश्वर के अस्तित्व को सिद्ध करते हैं। स्वामी जी दर्शन शास्त्रों और पूर्व के ऋषियों की मान्यता के अनुसार अनुमान तीन प्रकार का मानते थे- शेषवत्, पूर्ववत् और सामान्यतो दृष्ट। वे कहते थे कि वेद, दर्शन और उपनिषद् के प्रमाणों से ईश्वर का अस्तित्व सिद्ध है। स्वामी जी कोई नवीन विचारधारा नहीं चलाना चाहते थे, बल्कि वे अपना मत उसी को मानते थे, जो ब्रह्मा से लेकर जैमिनी पर्यन्त ऋषियों का रहा है।

रविवारीय सायंकालीन सत्संग में गुरुकुल के **ब्रह्मचारी वेदपाल जी** ने बताया कि संसार में जो भी पदार्थ उत्पन्न होता है, उसका विनाश निश्चित है। मनुष्य और अन्य प्राणियों का जन्म होता है, तो उसकी मृत्यु भी अवश्य होती है। जो वस्तु वर्तमान अवस्था में आई है, उसकी छ: अवस्थायें होती हैं- उत्पन्न होना, बने रहना, परिवर्तन होना, बढ़ना, क्षीण होना और नष्ट होना। इन्हीं छ: अवस्थाओं में विद्यमान यह चराचर जगत् है।

रविवारीय सत्संग के क्रम में **ब्रह्मचारी रोहित जी** ने कहा कि ईश्वर विश्वास के बिना हमारा आत्मबल नहीं बढ़ सकता। **पं. भूपेन्द्रसिंह जी** ने ईश्वर भक्ति तथा आर्य समाज सम्बन्धी कुछ गीत सुनाये।

ब्रह्मचारी रुद्रदत्त जी ने अथर्ववेद के मन्त्र 'भद्रमिच्छन्त ऋषय:.....।' की व्याख्या करते हुए कहा कि हमारा राष्ट्र कैसा हो और उसमें हमारा क्या योगदान हो? इस बात पर चिन्तन करना आवश्यक है।

परोपकारिणी सभा द्वारा नागौर में प्रचार कार्य- परोपकारिणी सभा केसरगंज, अजमेर (राज.) द्वारा १ दिसम्बर से ३१ दिसम्बर २०१५ तक नागौर जिले में वेद प्रचार सम्पन्न हुआ। इस आयोजन में आर्य उपप्रतिनिधि सभा, जिला-नागौर का पूर्ण सहयोग रहा। नागौर जिला सभा के प्रधान श्री किशनाराम आर्य जी ने इस आयोजन में अपना सक्रिय योगदान किया। परोपकारिणी सभा की ओर से पं. भूपेन्द्र सिंह जी एवं ढोलक वादक श्री ओमप्रकाश राघव ने शहरों तथा गाँव-गाँव में यज्ञ एवं भजनोपदेश किया। जिन स्थानों में यज्ञ, भजनोपदेश और वैदिक साहित्य वितरण हुआ, उन स्थानों तथा यजमानों के नाम इस प्रकार हैं-

०१ दिसम्बर को बिल्लू में चौधरी श्री मानाराम ठोलिया के घर। ०२ दिस. को शहर परबतसर में चौ. छोटूराम के विद्यालय में। ०३, ०४ को बडू कस्बे के माहेश्वरी भवन में। ०५, ०६ दिस. को कुचीपला में श्री शिवसिंह राव ग्रामसेवक के घर। ०७, ०८ दिस. को भींचावा में श्री हेमाराम आर्य के घर। ०९ दिस. को गोपालपुरा में चौ. श्री हनुमानराम बुगालिया के घर। १० दिस. को आर्य समाज छोटी खाटू में। ११ दिस. को आर्य समाज लाडनूं में। १२ दिस. को तंवरा में श्री डूंगरराम चौधरी के घर। १३ दिस. को बांकलिया में चौ. डॉ. श्री टीकाराम ठोलिया के घर। १४ दिस. को निम्बी जोधा में श्री श्रवण सिंह के घर। १५ दिस. को टालिनाऊ में श्री सोहनलाल प्रजापत के घर। १६ दिस. को आर्य समाज नागौर में। १७ दिस. को नागौर में ही चौ. श्री नानूराम बैंक मैनेजर के घर। १८ दिस. को कुचेरा में श्री गजेन्द्र आर्य के घर। १९ दिस. को आर्यसमाज मेड़ता

सिटी में। २० दिस. को चोलियास में चौ. श्री रमजीराम आर्य के घर। २१ दिस. को चोलियास में ही श्री श्यामलाल जाँगिड़ के घर। २२-२५ दिस. को डेगाना के श्री मेघराज जाँगिड़, सेठ हनुमान प्रसाद तापड़िया, श्री ओमप्रकाश, श्री मदनलाल जाँगिड़, श्री युधिष्ठिर गहलोत, श्री हरेन्द्र प्रजापत के घर। २६ दिस. को खिंवताना में चौ. भँवरलाल जाखड़ अध्यापक के घर। २७ दिस. को खिंवताना में ही श्री श्रवण सिंह आर्य के घर। २८-२९ दिस. को पावा में चौधरी भैराराम मऊड़िया के घर। ३० दिस. को मनाना में श्री भँवरसिंह पुत्र पाबुसिंह के घर। ३१दिस. बिल्लू में श्री महीपाल आर्य के आर्य निवास पर।

डॉ. धर्मवीर जी का प्रचार-कार्यक्रमः- (क) १-३ जनवरी २०१६ - आर्य समाज सन्देश विहार दिल्ली में वार्षिकोत्सव में व्याख्यान।

(ख) ९-१७ जनवरी २०१६ विश्व पुस्तक मेले में।

(ग) १७-२४ जनवरी सूरजमल विहार, दिल्ली में आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव में।

(घ) २५-२७ जनवरी २०१६ भिण्ड, म.प्र. में उपदेश।

(ङ) २९-३१- पवई, मुम्बई में पारिवारिक सत्संग।

आचार्य सोमदेव जी :- (क) १-३ जनवरी - जयपुर में सामवेद पारायण यज्ञ में ब्रह्मा **(ख)** ४-१० जनवरी २०१६ गाँव मुण्डिया, टोंक में यजुर्वेद पारायण यज्ञ में ब्रह्मा। **(ग)** १२-१४ जनवरी ग्राम जमानी, इटारसी में यज्ञ प्रवचन। आगामी-**(क)** १६-१७ जनवरी ग्राम टिटोली, रोहतक में सवामन घी से यज्ञ **(ख)** २९-३१ गुरुकुल हरीपुर, उड़ीसा के वार्षिकोत्सव में।

श्री सत्येन्द्रसिंह जी ने १३ से १७ जनवरी के मध्य जयपुर, राज. में एक परिवार में यज्ञ कराया एवं प्रवचन किये। कार्यक्रम में एक दिन राज्य के लोकायुक्त न्यायमूर्त्ति श्री सज्जनसिंह कोठारी भी उपस्थित रहे। दयानन्द महिला महाविद्यालय में ३१ जनवरी २०१६ को प्रवचन।

आचार्य कर्मवीर जीः- (क) २-३ जनवरी - जोधपुर में आर्यवीर दल के शिविर में, **(ख)** १२-१४ जनवरी - ग्राम इटारसी में यज्ञ प्रवचन। **(ग)** १८-२६ जनवरी - बीकानेर निवासी श्रीमती सीमा आर्या जी के सेंट सीनियर सैकण्ड्री एन.एन.पब्लिक स्कूल में बच्चों को शारीरिक व बौद्धिक प्रशिक्षण।

पुस्तक - परिचय

पुस्तक का नाम - जिज्ञासा-विमर्श
लेखक - आचार्य सोमदेव आर्य
प्रकाशक - वैदिक पुस्तकालय, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर, राज.-३०५००१
मूल्य - १००/- **पृष्ठ संख्या** - २६०

जीवन अमूल्य निधि है। इस निधि को शाश्वत बनाये रखने के लिए मानव प्रयत्नशील रहता है। उसके अन्तरमन में विचारों का प्रवाह उमड़ता रहता है। ये विचार उसे अस्थिर करते हैं- क्या ईश्वर है? उसको किसी ने देखा है? वह कहाँ रहता है? उसका कार्य क्षेत्र क्या है? कतिपय ईश्वर एवं उसकी सत्ता को स्वीकार ही नहीं करते। कुछ लोग अहम् ब्रह्मास्मि, अपने-आपको ब्रह्म मानते हैं। आज के युग में अन्धानुकरण चल रहा है। लोग अपने-आपको सिद्ध घोषित कर रहे हैं। मन्त्र देने में भी वे पीछे नहीं हैं। हर कोई प्रतिस्पर्धा से शिष्य बनाने में लगा है। अहो, हमारे ५० शिष्य हैं! शिष्यों से या गुरु से जिज्ञासा-समाधान किया जाय तो निरुत्तर हो जाते हैं तथा कहने लगते हैं- आप ढोंगी हैं। हमारे गुरु का मार्ग सही है। आप मूर्त्तिपूजक नहीं हैं। ईश्वर के अवतार को नहीं मानते- आदि उनकी अपनी कल्पनाएँ चलती रहती हैं। जिज्ञासा उत्पन्न होना एवं उसका विमर्श होना नितान्त आवश्यक है। इसी दृष्टिकोण का 'जिज्ञासा-विमर्श' में उल्लेख मिलेगा।

पुराणपन्थियों की लीला का दिग्दर्शन-

प्रातः काले शिवं दृष्टवा निशिपापं विनश्यति।
आजन्म कृतं मध्याह्ने सायाह्ने सप्त जन्मनाम्।

अर्थ- जो मनुष्य प्रातःकाल में शिव अर्थात लिङ्ग वा उसकी मूर्त्ति का दर्शन करे तो रात्रि में किया हुआ, मध्याह्न में दर्शन से जन्मभर का तथा सायंकाल में दर्शन करने से सात जन्मों का पाप छूट जाता है, यह दर्शन का माहात्म्य है। इनकी मूढ़ता का अवलोकन करने के लिये कितनी अन्ध श्रद्धा बताई है! पाप कभी नष्ट नहीं होते, वे तो बढ़ते हैं। उनका फल भोगना ही होगा।

कर्मकाण्ड में यज्ञ का महत्त्व स्पष्ट किया है। लेखक ने ईश्वर, वेद, जीवात्मा, संस्कार, साधना, मोक्ष, कर्मफल, सृष्टि, कर्मकाण्ड, व्याकरण व शास्त्र, परम्परा, इतिहास, पाखण्ड आदि विविध विषयों पर जिन-जिन महानुभावों की जिज्ञासायें हैं, उनका समाधान सटीक वेदोक्त आधार पर देकर संपुष्टि की है। लेखक का श्रम पाठकों की जिज्ञासाओं के समाधान हेतु सराहनीय है। लेखक का यह प्रयास आगे भी यथावत् है।

- देवमुनि, ऋषि उद्यान पुष्कर मार्ग, अजमेर

आर्यजगत् के समाचार

१. आवश्यकता- आर्य समाज रमेश नगर, करनाल, हरि. में पुरोहित की आवश्यकता है, जो कि संस्कार आदि करवाने में सक्षम हो। उन्हें ४०००/- प्रतिमाह मानदेय व रहने हेतु कमरा, लाईट, पानी की व्यवस्था समाज की ओर से रहेगी। यदि पुरोहित विवाहित हों, धर्मपत्नी शिक्षाविद् है तो विद्यालय में उन्हें भी रख लिया जावेगा।

२. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- महर्षि भारद्वाज आश्रम जुआ (पारणागड, वलांगिर, ओड़िशा) का वार्षिकोत्सव ९ से १० जनवरी २०१६ में हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। यज्ञ के ब्रह्मा स्वामी सोमानन्द जी- गाजियाबाद, उ.प्र. थे। कवीन्द्र ब्रह्मचारी के पौरोहित्य में तथा आश्रम के अध्यक्ष स्वामी सोमदेव जी के निर्देशन में यज्ञ और प्रवचन के कार्यक्रम हुए। आसपास के श्रद्धालु भक्तों की अच्छी उपस्थिति रही। गाँव जुआ के जगन्नाथ जी आर्य का उत्सव सम्पन्न कराने में बहुत अधिक सहयोग रहा।

३. यज्ञ का आयोजन- आर्य समाज गाँव अकालगढ़ ने स्थानीय शिव मन्दिर के प्रांगण में दि. ३० दिसम्बर २०१५ से ३ जनवरी २०१६ तक यजुर्वेद पारायण यज्ञ का बड़ा सफल आयोजन किया, जिसमें गाँव से तथा बाहर से भी सैंकड़ों स्त्री-पुरुषों ने श्रद्धापूर्वक भाग लिया।

४. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- १० से १३ दिसम्बर २०१५ तक प्रतिवर्ष के अनुसार इस वर्ष भी आर्यसमाज बारां का वार्षिकोत्सव धूमधाम से मनाया गया, जिसमें आचार्य आनन्द पुरुषार्थी-होशंगाबाद मुख्य वक्ता थे। पं. उपेन्द्र आर्य-चण्डीगढ़ और श्रीमती सावित्री आर्या-दिल्ली भजनोपदेशक थे, भजनों के माध्यम से सामाजिक, राष्ट्रीय व आध्यात्मिक विषयों पर प्रकाश डाला गया। आचार्य आनन्द पुरुषार्थी ने अपने प्रवचन में ईश्वर, जीव, प्रकृति का स्वरूप, वेदोक्त आज्ञा से दुर्गुणों का परित्याग, आर्य समाज का उद्देश्य व यज्ञ से याज्ञिक जीवन आदि विषयों पर प्रकाश डाला।

५. आर्य सम्मेलन सम्पन्न- आर्य जिला सभा ऊधमसिंह नगर का जिला आर्य सम्मेलन सरस्वती विद्या मन्दिर के विशाल कक्ष और प्रांगण में आचार्य डॉ. विश्वमित्र शास्त्री प्रधान आर्य जिला सभा ऊधमसिंह नगर की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम का प्रारम्भ यज्ञ से हुआ, यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य सुरेन्द्र शास्त्री थे, उसके बाद वृहद सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। संचालन सुरेन्द्र शास्त्री ने किया, इसमें रुद्रपुर क्षेत्र के माननीय विधायक श्री राजकुमार ठुकराल की उपस्थिति रही।

६. शिविर का आयोजन- आर्यवीर दल टंकारा द्वारा तहसील के १७ गाँवों में किशोर चरित्र निर्माण शिविर आयोजित कर ११ से १६ वर्ष के किशोरों में दुर्गुण न आये, वे व्यसनों के शिकार न बने, उत्तम संस्कारों का सिंचन हो एवं धार्मिक भावना प्रबल हो, शरीर से स्वस्थ हों, इन सबके लिए १० से २० दिन के शिविरों का आयोजन रखा गया। इन शिविरों में दण्ड, बैठक, आसन, लाठी, जूडो, कराटे का प्रशिक्षण दिया गया। शिविरार्थियों को शैक्षिक किट भी दिये गये। पं. सुवास शास्त्री ने प्रशिक्षक के रूप में सेवाएँ प्रदान की। आर्यवीर दल टंकारा की युवा टीम ने पूरी व्यवस्था सम्भाली।

७. शिक्षा कार्यक्रम- वैदिक वीरांगना दल, मालवीय नगर, जयपुर के द्वारा खेल-खेल में शिक्षा का कार्यक्रम आयोजित किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्रीमती शशि बंसल ने की तथा मुख्य अतिथि श्रीमती श्वेता सायरा थीं। कार्यक्रम में श्रीमती दुर्गा शर्मा व श्रीमती अंजू तांबी ने बच्चों को प्रेरणा देने वाली कहानियाँ सुनाकर बच्चों का उत्साहवर्धन किया। समाज सेविका डॉ. वैदेही तांबी ने बच्चों का मनोवैज्ञानिक तरीके से व्यक्तित्व विकास के उपाय बताए। संस्था की अध्यक्षा अनामिका शर्मा ने बताया कि कार्यक्रम में सभी वर्ग के बच्चों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर के नये संस्करण प्रकाशित

१. महर्षि दयानन्द का पत्र-व्यवहार (२ भाग में)
मूल्य= ८००.००

२. नवयुग की आहट (जीवन चरित्र) मूल्य= ६०.००

३. इतिहास की साक्षी मूल्य= ५०.००

४. जिज्ञासा विमर्श मूल्य= १००.००

५. आत्मकथा-महर्षि दयानन्द सरस्वती मूल्य=१५.००

वैदिक पुस्तकालय, दयानन्द आश्रम,
केसरगंज, अजमेर-३०५००१
दूरभाष- ०१४५-२४६०१२०